सफेद गुलाब

[उपन्यास]

•

शम्भुदयाल चतुर्वेदी

अलका प्रकाशन

इलाहाबाद—२

अलका प्रकाशन,
कर्नलगंज,
इलाहाबाद—२

प्रथम संस्करण
जुलाई, १९७०

मूल्य :
चार रु०, पचास पैसे

आवरण :
के० विक्रम

मुद्रक :
सुपरफाइन प्रिंटर्स,
१–सी० बाई का बाग, इलाहाबाद

अपनी बात

संसार का निर्माण चाहे जड़ तत्व से हुआ हो, चाहे चेतन से, या दोनों के संयोग से, इतना निश्चित है कि इसका विकास संघर्ष से ही हुआ है। आज सभ्यता और विज्ञान के इस युग में भी, जब मनुष्य चन्द्रमा पर कदम रख चुका है, इसी पृथ्वी के छोटे-से-छोटे स्तर के मनुष्य का दैनिक जीवन, संघर्ष से खाली नहीं है। हाँ, इतना है कि इस संघर्ष में कोई जीतकर भी रोता है, कोई हारकर भी मुस्कराता है। किसी के हाथ लगता है सफेद गुलाब, उसकी खुशबू, उसका रेशमी स्पर्श और किसी के दामन में रह जाते हैं सिर्फ गुलाब के काँटे! लेकिन कोई नहीं कह सकता कि जीत किसकी है और हार किसकी? गुलाब एक दिन मुरझा जाते हैं, काँटों को मुरझाने का डर नहीं होता।

कुछ ऐसे ही मेरे बहके-बहके खयालों ने जन्म दिया है इस उपन्यास को, जिसकी 'सफेद गुलाब' है रूपवती विदुषी और आधुनिक विचारों की डाक्टर नीलिमा, जो राष्ट्र के प्रति अपना और हर समझदार नागरिक का कर्तव्य समझकर परिवार-नियोजन का प्रचार करती है, जो हिंसक आन्दोलनों को समाप्त करने के लिए उनकी जड़ में स्थित गरीबी और विषमता को समाप्त करने पर जोर देती है, और जिसे पाने के लिए दो भावुक नवयुवक अपने-अपने ढंग का अनूठा बलिदान करते हैं।

हमारी इस शस्य श्यामला भारत भूमि की आजादी भी एक ऐसा ही मनमोहक खुशबूदार सफेद गुलाब रही है, जिस पर विदेशी काले भँवरे सन् १९६२ और १९६५ में लुब्ध

होकर आए और मँडराकर चले गए। उन्होंने देखा कि यहाँ गुलाब के रक्षक—ऐसे काँटे—भी मौजूद हैं, जो संगीन बनकर उनकी छाती में छेद कर सकते हैं। 'सफेद गुलाब' में ऐसे भ्रमरों के आने और काँटों को देखकर विफल-मनोरथ हो जाने की भी कथा है, जो तथ्यों पर आधारित है।

हो सकता है, मेरी ही पीढ़ी का अति-यथार्थवादी—दूसरे शब्दों में निराशावादी वर्ग—इस उपन्यास में व्यक्त मेरे विचारों से सहमत न हो सके। किन्तु मुझे उनसे कोई शिकायत नहीं। यह असम्भव है कि जिस व्यक्ति की एक अपनी विचारधारा हो, उसकी आलोचना न हो।

मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मेरी दृष्टि में साहित्य सिर्फ वर्तमान की विकृतियों और कुण्ठाओं का भयंकर चित्र ही नहीं, भविष्य के लिए एक आशा, एक नई दिशा का संकेत भी है। निराशावादी साहित्यकार केवल संत्रास और घुटन का यथावत् चित्र खींचता है और आशावादी कलाकार इस चित्र में आशा की एक किरण और प्रकाश की एक रेखा भी अंकित कर देता है।

'सफेद गुलाब' में भी भरसक मेरा प्रयास यही रहा है कि आज के युग के कटु सत्यों का चित्रण यथावत् हो, साथ ही आज के अन्धकार में निहित वे सम्भावनाएँ भी सामने लाई जाएँ, जिनके विश्वास पर मनुष्य हर बुराई से टक्कर लेता चले। इस कृति में यह लक्ष्य कहाँ तक पूर्ण हो सका है, इसका उत्तर पाठक ही दे सकते हैं।

जय हिन्द, जय जगत्, जय मानव !

इलाहाबाद, —शम्भुदयाल चतुर्वेदी
४, सितम्बर, १९६९

सफेद गुलाब

१

राजनगर का प्लेटफार्म ज्योंही ट्रेन की खिड़कियों से दिखाई पड़ने लगा, मेजर श्यामसिंह की इच्छा ट्रेन रुकने के पहले ही नीचे कूद पड़ने की हुई; किन्तु उन्होंने खुशी के इस आवेग को जबरन रोक लिया। उनका मन बाँसों उछल रहा था। लगता था, कब उतरकर वह किसी ताँगे से बस-स्टैण्ड पहुँचें और वहाँ से अपने गाँव की ओर जानेवाली पहली ही बस पकड़कर घर जा पहुँचें—अपनी प्रियतमा नई-नवेली आभा के पास।

शादी के बाद पहली बार मेजर छुट्टी लेकर घर आए हैं। उन्हें लग रहा था, इस छुट्टी का एक भी क्षण व्यर्थ न जाने पाए; हर मिनट, हर घड़ी अपनी आभा के पास ही रहें। एक सप्ताह की हँसी-खुशी है, उसके बाद फिर कर्त्तव्य, कठोर कर्त्तव्य, जिसकी उपेक्षा एक सिपाही, देश की सीमाओं का एक पहरुआ कभी नहीं कर सकता।

ट्रेन रुक गई थी। मेजर ने जल्दी में कुली भी नहीं किया। अपना बड़ा-सा मिलिटरी होल्डआल स्वयं कन्धे पर उठाया और तेज-तेज कदमों से, भीड़ तथा कोलाहल से भरे प्लेटफार्म को पार करने लगे।

'चाय गरम! पानवाला!' आदि स्वर उनके कानों में पड़ रहे थे, लेकिन उनका मन अपने गाँव में पहुँच चुका था। कच्ची सड़क के बाद, पगडण्डियों के पार, पेड़ों की छाया से शीतल स्थान में उनका घर है। इस समय उनके घर की रसोई से धुआँ उठ रहा होगा। शायद माँ और छोटा भाई रामू खा रहे हों। आभा अपने गोरे हाथों से परोस रही होगी। 'आभा!' उसके स्मरण-मात्र से उनके कानों में जैसे घुँघरू बज उठे।

फिर खयाल आया, चैत लग गया है। फसलों की ढुलाई का काम तेजी से चल रहा होगा। गोदाम भरे जा रहे होंगे। छोटे भैया रामसिंह पर बहुत बोझ आ पड़ा होगा। उसने लिखा था, बिस्कुट फैक्टरी में नौकरी भी करने लगा है। इधर यह फसलों की कटाई-ढुलाई का काम!

'अरे; हाँ! रामू स्टेशन क्यों नहीं आया!' उनकी विचार-शृङ्खला पर सहसा विराम लग गया। 'शायद चिट्ठी नहीं मिली, या काम की अधिकता के कारण........'

'भैया!' उन्हें पीछे से किसी का हाँफता हुआ प्रसन्न स्वर सुनाई दिया। वह पीछे घूम पड़े।

'अरे, रामू!' वह खुशी से उछले और होल्डआल वहीं पटककर प्लेटफार्म पर ही उससे लिपट गए, 'तूने तो वही कहावत चरितार्थ कर दी कि—शैतान का स्मरण करो और शैतान हाजिर।'

'और क्या भैया!' रामू भी मुस्कराकर उनसे आहिस्ते-से अलग होते हुए बोला, 'तुम्हें ढूँढ़ने के लिए प्लेटफार्म पर इधर से उधर दौड़ते-दौड़ते दम फूल गया, और इस पर 'शैतान' की उपाधि अलग से मिल रही है!'

'तू बुरा मान गया?' श्यामसिंह ने स्नेह से पूछा, और जैसे ही

होल्डआल उठाने को वह झुके कि रामसिंह ने लपककर उसे उठा लिया।

'शैतान तो मैं हूँ ही भैया!' रामू मुस्कराते हुए बाहरी गेट की ओर बढ़ते हुए बोला, 'बचपन से ही था, फिर आजकल तो मेरी शैतानी की फैक्टरी से लेकर घर तक बड़े जोरों से चर्चा है।'

'क्या मतलब?' श्यामसिंह ने उत्सुकतावश पूछा और साथ ही गेट पर खड़े चैकर की ओर अपना 'पास' बढ़ा दिया।

'बताता हूँ, थोड़ा दम लो।' रामसिंह ने अपने भैया की उत्सुकता बढ़ाने के लिए किंचित् मुस्कराते हुए कहा और फिर 'कहाँ चलना है बाबू? कहाँ भैये?' आदि का शोर मचाते ताँगेवालों से बस-स्टैण्ड तक चलने के लिए किराया वगैरह तय करने लगा।

'हाँ, अब बतलाओ न वह बात?' मेजर ने एक ताँगे पर रामू की बगल में बैठते हुए उससे पूछा।

'कौन-सी?' रामू ने मासूम-सा चेहरा बनाकर पूछा। उसे अपने भैया को तथा सभी लोगों को छकाने में इसी तरह आनन्द आता है। यह बचपन से उसकी आदत है।

'अब दूँगा एक धौल, शैतान कहीं का!' श्यामसिंह ने हँसी रोककर झूठा गुस्सा दिखलाते हुए अपना एक हाथ हवा में उठाया।

'अररर....!' रामू ने इस पर जल्दी से गर्दन झुकाई, जैसे भैया सच-मुच ही धौल जमा देंगे, और कहा—'हाँ—हाँ, शैतान कहा तो याद आया—वही मेरी शैतानी वाली बात!'

'हाँ—आँ!' मेजर हँस पड़े, 'बड़ी जल्दी याद आ गया!'

'क्या करूँ, मेरी स्मरणशक्ति कमजोर होती जा रही है!' रामू ने मजाक के स्वर में कहा, किन्तु मेजर का मुँह बनते देख, फिर धौल खाने के डर से कहा, 'तो मैं यह कह रहा था कि मेरी शैतानी की घर से लेकर फैक्टरी तक चर्चा है। घर में तो माँ और तुम, मुझे सदा से ही शैतान कहते आए हो, अब भाभी भी कुछ ऐसा ही फ़तवा देने लगी हैं।'

होल्डग्राल उठाने को वह झुके कि रामसिंह ने लपककर उसे उठा लिया।

'शैतान तो मैं हूँ ही भैया!' रामू मुस्कराते हुए बाहरी गेट की ओर बढ़ते हुए बोला, 'बचपन से ही था, फिर आजकल तो मेरी शैतानी की फैक्टरी से लेकर घर तक बड़े जोरों से चर्चा है।'

'क्या मतलब?' श्यामसिंह ने उत्सुकतावश पूछा और साथ ही गेट पर खड़े चैकर की ओर अपना 'पास' बढ़ा दिया।

'बताता हूँ, थोड़ा दम लो।' रामसिंह ने अपने भैया की उत्सुकता बढ़ाने के लिए किंचित् मुस्कराते हुए कहा और फिर 'कहाँ चलना है बाबू? कहाँ भैये?' आदि का शोर मचाते ताँगेवालों से बस-स्टैण्ड तक चलने के लिए किराया वगैरह तय करने लगा।

'हाँ, अब बतलाओ न वह बात?' मेजर ने एक ताँगे पर रामू की बगल में बैठते हुए उससे पूछा।

'कौन-सी?' रामू ने मासूम-सा चेहरा बनाकर पूछा। उसे अपने भैया को तथा सभी लोगों को छकाने में इसी तरह आनन्द आता है। यह बचपन से उसकी आदत है।

'अब दूँगा एक धौल, शैतान कहीं का!' श्यामसिंह ने हँसी रोककर झूठा गुस्सा दिखलाते हुए अपना एक हाथ हवा में उठाया।

'अररर....!' रामू ने इस पर जल्दी से गर्दन झुकाई, जैसे भैया सच-मुच ही धौल जमा देंगे, और कहा—'हाँ—हाँ, शैतान कहा तो याद आया—वही मेरी शैतानी वाली बात!'

'हाँ—आँ!' मेजर हँस पड़े, 'बड़ी जल्दी याद आ गया!'

'क्या करूँ, मेरी स्मरणशक्ति कमजोर होती जा रही है!' रामू ने मजाक के स्वर में कहा, किन्तु मेजर का मुँह बनते देख, फिर धौल खाने के डर से कहा, 'तो मैं यह कह रहा था कि मेरी शैतानी की घर से लेकर फैक्टरी तक चर्चा है। घर में तो माँ और तुम, मुझे सदा से ही शैतान

जाएगा, जिसमें न कोई नौकर होगा, न कोई मालिक, मेहनतकश लोग ही सारी भूमि के मालिक होंगे।'

मेजर ठठाकर हँस पड़े, जैसे इतनी देर रामू उन्हें कोई परी-कथा सुनाता रहा हो।

'ऐसी क्रान्ति असम्भव नहीं,' रामू ने ताँगे को बस-स्टैण्ड के शोर भरे और भीड़ भरे कम्पाउण्ड में घुसते देख, जल्दी से अपनी बात समाप्त की, 'जहाँ दमन होता है, क्रान्ति भी वहीं होती है, जैसे रूस में हुई थी।'

इन लोगों के गाँव को जानेवाली बस छूटने को तैयार खड़ी थी और उसका ड्राइवर शायद अन्तिम हार्न दे रहा था। कुछ ही क्षणों में इन लोगों का सामान बस की छत पर था और ये लोग थे बस के अन्दर, जो हार्न बजाती और भरभराती, बस-स्टैण्ड से बाहर निकल रही थी।

जब बस की खिड़कियों से नगर की चहल-पहल पीछे छूट चली और सुन्दर प्राकृतिक दृश्य दिखलाई पड़ने लगे, तो मेजर ने पिछली बातों का सूत्र पकड़ते हुए कहा, 'रामू, मैं तुम्हारी राजनीति तो समझता नहीं, भैया, और न एक सैनिक को, मेरे विचार से इसमें पड़ना ही चाहिए। लेकिन इतना कह सकता हूँ, जिस देश को तुमने और तुम्हारे जैसे विचार के नवजवानों ने अपना आदर्श बनाया है, उस देश की और यहाँ की परिस्थितियों में जमीन-आसमान, बल्कि आकाश-पाताल का फर्क है।'

'यानी रूस और भारत की ?' रामू ने टोका।

'हाँ !' मेजर ने दृढ़ता से कहा, 'रूस में क्रान्ति के जैसे कारण मौजूद थे, यहाँ नहीं हैं। वहाँ ज़ार की बर्बर तानाशाही थी, यहाँ प्रजातन्त्र है। वहाँ जनता में एकता बनाए रखनेवाली एक आम सम्पर्क भाषा थी, यहाँ हिन्दी-अहिन्दी का सिर-फुटौवल है। वहाँ के लोगों का धर्म एक था, यहाँ पचीसों सम्प्रदाय हैं।'

'हूँ !' रामू भी कुछ सोच में पड़ गया।

'और जो सबसे बड़ी बात है,' मेजर ने गम्भीर होकर कहा, 'वह यह कि तुम दुश्मनों से घिरे हो। क्रान्ति-भ्रान्ति तो खाक होगी, चीन और पाकिस्तान यहाँ की अराजकता का लाभ उठाकर तुम्हें कभी दबोच बैठेंगे।'

'तो आपका मतलब है,' रामू ने कुछ शिकायत के स्वर में कहा, 'कि हम लोगों को क्रान्ति लाने का प्रयास ही छोड़ देना चाहिए?'

श्यामसिंह के कोई उत्तर देने के पहले ही इन दोनों का ध्यान, ठीक पीछे की सीट पर बैठी किसी युवती की मधुर खिलखिलाहट से भंग हो गया।

पीछेवाली सीट पर बैठी हुई एक आधुनिक युवती, जिसकी देह पर, शरीर के सुडौल उभारों को प्रकट करनेवाली चुस्त नीली साड़ी तथा वैसा ही चुस्त नीला ब्लाऊज़ उसके सुलझे हुए तथा प्रगतिशील विचारों की घोषणा कर रहा था, बड़ी देर से शायद इन दोनों भाइयों की बातों को ध्यान से सुन रही थी। और, सुनती क्यों नहीं? ये दोनों भाई युवा थे, आकर्षक थे। बुश्शर्ट-पैण्टधारी, क्लीनशेव्ड सुन्दर रामसिंह और उससे ही कुछ-कुछ मिलते-जुलते चेहरे-मोहरे वाले, किन्तु नुकीली मूँछों पर ताव दिए हुए, फौजी वर्दीधारी तगड़े-मजबूत मेजर!

दोनों ही किसी युवती को आकर्षित करने के लिए काफी थे। किन्तु फिर भी युवती रामसिंह की ओर ही कुछ अधिक मधुर दृष्टिपात कर रही थी। शायद उसे मेजर की तीखी नुकीली मूँछों से विरक्ति हो रही हो! कुछ भी हो, इन आकर्षक नवयुवकों की बातें भी उसके लिए कम आकर्षक नहीं थीं।

'एक्सक्यूज़ मी!' मेजर ने पीछे मुड़कर कुछ फौजी ढंग की रुखाई के साथ कहा, 'एक बात पूछ सकता हूँ?'

'एक नहीं, दो पूछिए!' मुसकराते हुए कहा युवती ने, और रामसिंह को हँसी रोकने के लिए रूमाल मुँह में ठूँसना पड़ा।

'क्या आपकी हँसी का लक्ष्य' मेजर ने उसी स्वर में पूछा, 'हम लोग हैं ?'

'जी नहीं, आप लोगों की बातें।' युवती ने भी मेजर की खीझ का मन ही मन मजा लेते हुए कह दिया।

'क्या मतलब ?'

'मतलब यह कि आपके ये—शायद छोटे भाई साहब,' युवती ने मुस्कराकर रामसिंह की ओर अपनी सुन्दर, पतली-सी अँगुली का इशारा करते हुए कहा, 'मालूम होता है, क्रान्ति करने पर आमादा हैं !'

'जी, पर इसमें आपको तकलीफ ?' इस दफा बारी रामसिंह के खीझने की थी।

'जी, बिलकुल नहीं !' युवती ने मानो रामसिंह को चिढ़ाते हुए कहा, 'पर क्रान्ति कोई गाय-भैंस नहीं, कि आप इच्छानुसार उसको रस्सी बाँधकर ले आएँ। क्रान्ति न तो इच्छानुसार लाई जा सकती है, न उसका वक्त आने पर रोकी ही जा सकती है।'

'तब ?'

'क्रान्ति के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ इस देश में हैं या नहीं, इस पर विभिन्न मत हो सकते हैं।' युवती ने पहले जैसी ही रहस्यमयी मुस्कान के आवरण में कहा, 'किन्तु क्रान्ति कैसी परिस्थितियों में होती है, इस पर आपके भाई साहब का विश्लेषण उनके गहरे मनन का प्रमाण अवश्य है।'

मेजर की तीखी मूँछों के पीछे से विजय की मुस्कान नृत्य कर उठी।

रामसिंह दाल-भात में मूसरचन्द की तरह टपक पड़नेवाली इस अपरिचिता के प्रति मन ही मन एक खीझ से भर उठा। 'नेतागीरी' के चक्कर में इस तरह की बहस का उसको इधर काफी अनुभव हो चुका था, लेकिन दो के मुकाबिले में अकेला पड़ जाने पर विषय बदलने में भी वह कुशल था।

'मान गया देवीजी !' वह ठठाकर हँस पड़ा, 'मान गया श्रापकी 'डिवाइड एण्ड रूल पालिसी' को। मेरी नई भाभीजी भी अब तक हम दोनों भाइयों को डिवाइड नहीं कर पाई, किन्तु आपने एक ही मिनट में....'

'अरे शैतान !' मेजर ने झेंप भरी मुस्कान के साथ हवाई मुक्का लहराया ही था कि रामू उछलकर दूसरी ओर की खाली सीट पर चला गया।

'आपके छोटे भाई काफी दिलचस्प मालूम होते हैं,' युवती ने हँसकर कहा। उसका चेहरा निर्विकार था। शायद लाज-शर्म के झूठे प्रदर्शन से उसे नफरत थी।

'जी हाँ !' मेजर के उत्तर देने के पहले ही रामू फिर हँसकर बोल उठा, 'दिलचस्प भी हूँ और शैतान भी; लेकिन मैडम, आपने तो अपना परिचय अब तक दिया ही नहीं ?'

मेजर अपरिचित औरतों से कुछ झिझकते थे, विशेषकर नव-युवतियों से, अतः उन्होंने टेढ़ी दृष्टि से घूरकर रामू की तरफ देखा, लेकिन उसकी नजरें तो युवती के समूचे शरीर पर फिसल रही थीं।

'मेरा परिचय ?' युवती ने भी मधुर दृष्टि से रामू को देखते हुए अपनी विशेष रहस्य भरी मुस्कान के साथ कहा, 'मुझे नीलिमा कहते हैं।'

'वह तो आपके नीले वस्त्रों को देखकर ही कहा जा सकता है।' रामू ने अपने भैया की घूरती हुई आँखों की परवाह न कर अपनी मस्ती भरी मुस्कान के आवरण में, जो किसी भी समवयस्का तरुणी को पागल बना देने के लिए काफी थी, युवती की आँखों में आँखें डालकर कहा, 'लेकिन श्रीमती या....?'

'कुमारी नीलिमा !' युवती ने मानो गलती सुधारते हुए कहा।

'कहाँ तक चल रही हैं ?'

'बस, अगले ही पड़ाव तक। यहाँ आजकल नवदुर्गा का मेला लगा

हुआ है। बहुत-सी दूकानें हैं, बाहर से लोग आते हैं, कुछ बीमार भी पड़ते हैं, इसलिए........'

'समझा !' रामू ने कहा, 'आप डाक्टर हैं शायद। ताज्जुब है, आपका बैग देखकर अब तक मैं क्यों नहीं समझ सका। वहाँ के टैम्परेरी हास्पिटल में आपकी नियुक्ति हुई होगी मरीजों को देखने के लिए।'

'वह तो है ही।' युवती ने हँसते हुए कहा—'सबसे बड़ी चीज है वहाँ आनेवाली ग्रामीण महिलाओं में परिवार-नियोजन यानी फैमिली-प्लानिंग का प्रचार।'

'ओह गुड !' रामू के मुँह से रोकते-रोकते भी मुस्कान के साथ निकल ही गया, 'नवदुर्गा के मेले में परिवार-नियोजन का प्रचार ! खयाल अच्छा है।'

'लेकिन,' मेजर अपनी जिज्ञासा दबा न सके, 'आप तो 'अनमैरिड' हैं !'

'तो क्या हुआ !' युवती ने सहज मुस्कान के साथ कहा, 'डाक्टर के लिए झूठी लाज-शरम की मैं जरूरत नहीं समझती। फिर अपने गरीब देश में तो हम सबको अपना फर्ज समझकर परिवार-नियोजन का प्रचार-प्रसार करना होगा, नहीं तो बढ़ती हुई आबादी हमारी सारी तरक्की, सारी प्रोग्रेस को हजम कर जाएगी।'

'परन्तु जब खानेवाले मुँह बढ़ते हैं,' रामू ने प्रतिवाद किया, 'तो काम करनेवाले हाथ भी तो बढ़ते हैं। और, आबादी क्या सिर्फ हमारे ही मुल्क में बढ़ रही है ?'

'आपके पहले सवाल का जवाब तो यह है,' युवती ने अपनी कलाई-घड़ी की तरफ देखकर कहा, 'कि हाथ मेहनत शुरू करते हैं—जन्म के करीब दस-पन्द्रह साल बाद और मुंह तथा पेट कुछ-न-कुछ माँगते हैं पहले ही दिन से।'

एक क्षण रुककर युवती ने, प्रभाव जानने के लिए, दोनों भाइयों की ओर क्रम-क्रम से देखा, मेजर प्रभावित-से दिखे।

'और दूसरे प्रश्न का उत्तर यह कि भारत जैसे गर्म देश में, जहाँ गरीब जनता के पास सिनेमा तथा 'इण्टरकोर्स' के अतिरिक्त मनोरंजन के अन्य कोई साधन नहीं हैं, निश्चय ही आबादी दूसरे देशों की तुलना में बहुत अधिक बढ़ रही है! इसके लिए जहाँ हमें जनता को सिनेमा आदि मनोरंजन के साधन कम खर्च में उपलब्ध कराने होंगे, वहाँ 'लूप', 'कायडम' आदि का प्रचार झूठी शर्मोहया छोड़कर करना होगा।'

युवती की इस स्पष्टोक्ति पर मेजर दंग रह गए। उन्होंने अभी तक गाँव की, हाथ भर लम्बे घूँघट में छिपी रहनेवाली तथा सास-ससुर के सामने पति से बात करने तक में हिचकनेवाली नारियाँ ही देखी थीं, इस प्रगतिशील आधुनिका को देखकर वह बस, देखते ही रह गए!

'मेरा पड़ाव आ गया है।' युवती नीलिमा ने फिर कलाई-घड़ी को तथा खिड़कियों से दिखाई पड़नेवाली रंगबिरंगे कपड़े पहने स्त्रियों और बच्चों की भीड़ को देखकर दोनों भाइयों को हाथ जोड़े, 'आप दोनों के साथ मेरा सफर काफी दिलचस्पी से गुजरा। मेले में आइए, तो परिवार-नियोजन-केन्द्र पर आना न भूलिए। नमस्ते!'

दोनों भाइयों के हाथ भी यंत्रचालित से जुड़ गए।

'मैं तो क्या, मेरे ये भैया जरूर आएँगे परिवार-नियोजन-केन्द्र पर।' रामू ने शरारत से कहा, 'मैं अभी अकेला हूँ।'

चाहकर भी इस बार मेजर, रामू पर क्रोध का प्रदर्शन न कर सके। वह मंत्रमुग्ध-से हो गए थे।

बस कब रुकी, कब डॉ० नीलिमा उतर गई और कब बस रामू के गाँव की तरफ चल पड़ी, रामू का मस्तिष्क यह सब ग्रहण न कर सका। गाँव आने तक एक घण्टे में वह घरबार और खेती सम्बन्धी मेजर के प्रश्नों का यद्यपि यंत्रवत् उत्तर देता रहा, किन्तु उसकी आँखों में केवल

के बाद चीन सतर्क हो गया है। अब वह केवल जुबानी जंग चला रहा हैं।'

'क्या मतलब ?'

'मतलब, वे भोंपू पर हिन्दी में चिल्लाते हैं।' मेजर ने चिल्लाकर बतलाया, 'हिन्दुस्तानी सिपाहियो, अपनो प्रतिक्रियावादी पूँजीपतियों की सरकार का तख्ता पलट दो, हिन्दुस्तान में लाल झण्डा लहरा दो !'

'फिर ?' किसी ने घबराकर पूछा।

'घबराने की क्या बात है ! हम लोग इधर से चीनी भाषा में जवाबी प्रचार करते हैं', मेजर ने फिर दोनों हाथ अपने मुँह पर लगाकर नकल बनाई, 'चीनी जवानो, तुम्हारी चाऊ-माऊ की सरकार हत्यारी है। उसने कैण्टन और शंघाई में सांस्कृतिक क्रान्ति के नाम पर हजारों चोनियों को मौत के मुंह में झोंक दिया है। उस हत्यारी सरकार को उलट दो और चीन में असली प्रजातंत्र की नींव रक्खो !'

'क्या वे ऐसा करेंगे ?' राघे फिर बोले।

'करना-धरना तो न हमें कुछ है, न उन्हें।' मेजर हँस पड़े, 'वे भी इस बात को समझते हैं और हम भी; मगर यही तो प्रचार-युद्ध कहलाता है।'

'आजकल गाँव में एक अजीब साधू आया है।' प्रचार की बात चलने पर तिनकू ताऊ अपनी खरखराती आवाज़ को कुछ रहस्यमयी बना कर बोले, 'वह भी कुछ अजीब-सी वातों का परचार करता है।'

'क्या कहता है ?'

'कहता है, भगवान् ने किसी को अमीर या गरीब पैदा नहीं किया। कुछ लोग लूट के बल पर अमीर बन गए हैं। रुपया 'माया' है, जिसने उन्हें भगवान् से दूर कर दिया है।'

'यहाँ तक तो ठीक ही कहता है; आगे ?'

'कहता है, चीन में ग़रीबों ने अमीरों के हाथ से जायदादें छीन ली

हैं। वहाँ जनता की सरकार राज कर रही है। कहता है, हमारे यहाँ की सरकार सिरिफ अमीरों की रच्छक है और अपने पापों को छुपाने के लिए चीन से झगड़ा कर रही है।'

'क्या ?' मेजर चौंक उठे। उन्हें यह साधु पूरा 'राजनीतिक आदमी' मालूम हुआ, परन्तु बात पूरी सुनने की गरज से धैर्य रखते हुए बोले, 'और कुछ कहता है ?'

'हाँ।'

'क्या ?'

'यही कि हमारे सिपाही प्रान दे-देकर जो जमीनें हासिल करते हैं, सरकार उन्हें पाकिस्तान को लौटा देती है। इसलिए फौज में भर्ती होने के बजाय, पहले हनुमानजी की लाल सेना बनाकर इस सरकार को ही पलट दो, उसके बाद पाकिस्तान से या किसी और से लड़ने की सोचो।'

'वाह ! क्या खूब तालमेल बैठाया है धर्म और राजनीति का।' मेजर ठहाका मारकर हँसे बिना न रह सके, फिर सहसा गम्भीर हो गए; 'लेकिन याद रहे ! ऐसे लोग साधु नहीं, चोर होते हैं चोर, जो विदेशी पैसे पर हलवा-पूरी उड़ाकर अपने देश को उन खूनी सौदागरों के हाथ बेच देने में नहीं हिचकते।'

'एँ।' सब चौंक पड़े।

'जी हाँ !' मेजर ने कहा, 'किसी का मुँह हम नहीं पकड़ सकते, लेकिन हमें उनकी बातों में नहीं आना है। हमारे देश में हमारी सरकार को कोसना जितना आसान है, उतना चीन में वहाँ की सरकार को कोसना आसान नहीं। यदि चीन को स्वर्ग समझनेवाले ऐसे 'महात्मा' चीन में खड़े होकर वहाँ की सरकार के खिलाफ दो शब्द भी कहकर देखें, तो इन्हें सदा के लिए 'खामोश' कर दिया जाए। यह हमारी लोकतंत्रीय सरकार ही है, जो लोगों को इतनी आजादी देती है, फिर भी गालियाँ सुनती है।'

कमरे में कुछ देर को सन्नाटा हो गया। मेजर की बात का पर्याप्त

असर पड़ा था, और सम्भवतः उस साधु के प्रति एक आक्रोश सबके दिल में पैदा हो गया था।

घण्टों इधर-उधर की बातें होती रहीं। उनका आँगन आज चौपाल बन गया। अब कहीं वे लोग गए हैं। पर मजा यह कि रामू उन्हें घर भेजकर कहीं ऐसा गया कि अभी तक गायब है।

मेजर श्यामसिंह इस समय एक बनियान और धोती में पलंग पर करवटें बदल रहे थे और मन ही मन रामू पर ताव खा रहे थे। उन्हें आभा का बेसब्री से इन्तजार था, और आभा है कि रसोई में बैठी है रामू के इन्तजार में—कब वह आए और उसे गरम खाना परोसकर वह पति के पास पहुँचे।

दिन भर के थके श्यामसिंह को जमुहाइयाँ आ रही थीं, परन्तु आभा के इन्तजार में जागते भी रहना चाहते थे। आखिर शादी के करीब छः महीने बाद तो घर आए हैं वह।

सहसा पीठ में कुछ चुभा! क्या नये पलंग में खटमल आ घुसे? होगा, आभा से पूछूँगा। पलंग के दाहिनी ओर की पाटी दीवार से सटी थी। श्यामसिंह उसी ओर करवट किए थे।

नींद के झोंको से उनके मस्तिष्क में विचार गड्डम-गड्ड हो रहे थे। 'अजीब है यह आभा! मुझे घर आए पाँच-छः घण्टे हो गए, लेकिन अब तक इसे मेरे पास आने की फुरसत नहीं। माना कि वह रामू भी एकदम गधा है; पर उसके लिए गरम खाना लिए बैठी रहने की क्या जरूरत? एक दिन ठण्डा खाना खाएगा, तो दूसरे दिन से समय पर लौटने लगेगा। ....उफ! ये खटमल! इन्हें भी अभी मरना था।....

'गाँव की शान्त हवाओं में राजनीति का जहर फैलने लगा है। रामू हड़तालियों और दंगाइयों का नेता बन रहा है। और वह साधु, जिसका जिक्र ताऊ तिनकू कर रहे थे? और, जो राजनीति में दखलन्दाजी करता है, वह भी कम रहस्यमय नहीं प्रतीत होता! लानत है इन सिरफिरे साधु-

महात्माओं पर, जो हर बात में अपनी टाँग अड़ाए बिना नहीं मानते। कुछ मूर्ख किस्म के साधु परिवार-नियोजन के ख़िलाफ़ प्रचार कर ही रहे थे, अब यह नया खुराफात शुरू !'

परिवार-नियोजन के ख़याल से एक शक्ल दिमाग में चमक उठी : डाक्टर नीलिमा। बदलते हुए भारत की साक्षात् तसवीर !

फिर कुछ चुभा ! 'ये खटमल नहीं हो सकते। दाल में कुछ काला है।' मेजर हठात् उछल पड़े।

पलंग के नीचे से खिलखिलाकर हँसने की आवाज आई।

'आभा ! तुम ?'

'जी, और मेजर साहब ने क्या समझा था ?'

'खटमल।' मेजर ने मुस्कराते हुए कहा और दोनों हँस पड़े। मेजर ने फिर मजाक के स्वर में कहा, 'खोजा खटमल और निकलीं आभा रानी !'

'यह क्यों नहीं कहते—खोदा पहाड़, निकली चुहिया !'

'यही कह लो।'

'पर नन्हीं-सी चुहिया ने बिलौटे को कैसा छकाया ?'

'मगर अब बिलौटे से बचकर जाएगी कहाँ ?' मेजर ने हँसते हुए आभा के दोनों हाथ थामकर उसे पलंग पर खींच लिया।

'जाना चाहती ही कब है !' आभा ने लजाते हुए कहा।

'ऐसी बात है !' मेजर ने आभा से दृष्टि मिलाकर कहा, तो वह और भी अधिक लजा गई।

मेजर के हाथ आभा की पीठ पर पहुँचे और ब्लाऊज़ के बटन 'चुट-चुट' कर उठे।

'हाय राम ! बत्ती तो बुझा दो।'

'नहीं, यों ही....।'

जाड़ा अभी पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ था। कुछ ही क्षणों में एक

चादर ने दोनों को ढक लिया। फिर कुछ देर शान्ति रही, शायद बिना शब्दों के ही दोनों अपने-अपने भाव व्यक्त कर रहे थे और एक दूसरे के भाव समझ रहे थे।

'तुमने तो मुझे आज डरा ही दिया था!' थोड़ी देर में मेजर ने मुस्कराते हुए कहा।

'आप दीवार की तरफ करवट लिए लेटे थे, मैं रामू भैया को खिला-पिलाकर और खुद खाकर आयी, तो मैंने सोचा, सो न गए हों। बस, मैं पलंग के नीचे घुस गई धीरे से, और बालों में से चिमटी निकालकर....'

'समझ गया।' मेजर हँस पड़े, फिर सहसा कुछ याद आया, 'हाँ, यह रामू क्या रोज इतनी रात गए लौटकर आता है?'

'नहीं। कभी-कभी।'

'कहाँ जाता है?' मेजर ने मुस्कराते हुए पूछा, 'क्या कोई प्रेम-व्रेम का चक्कर है?'

'हाँ, उन्हें प्रेम हो गया है।'

'किससे?' मेजर की उत्सुकता बढ़ी।

'एक महात्माजी से।'

'धत्तेरे की!' मेजर ने बुद्धू बनाए जाने पर आभा को चिकोटी काट ली।

'उई—उई! मुझे क्यों नोचते हो बाबा?'

'क्योंकि तुमने मुझे फिर बुद्धू बनाया।' मेजर ने दोपहर की बातें याद करते हुए कहा, 'हाँ, ये महात्मा वही तो नहीं हैं, जिनका जिक्र....'

'दोपहर को ताऊ कर रहे थे! वही हैं।' आभा ने दोपहर को भीतर से इन लोगों की बातें ध्यान से सुनी थीं।

'बड़ी कीर्ति सुनी है इनकी। अब सब समझ में आ गया।'

'क्या आ गया समझ में?'

'इन्हीं साधु बाबा ने इस रामू का दिमाग खराब किया है।'

'क्या मतलब '?

'मतलब यह कि महात्माजी के जैसे कुछ विचार सुनने में आए हैं, करीब वैसे ही विचार यह रामू आज मुझसे ताँगे में व्यक्त कर रहा था।'

'ऐसा ?'

'हाँ !' मेजर कुछ देर विचार में डूब गए, फिर बोले, 'ऐसे ही ढोंगी महात्माओं की वजह से हमेशा यह देश तबाह हुआ है।'

आभा कहना तो चाहती थी कि एकदम किसी के बारे में राय कायम करना ठीक नहीं; किन्तु वह चुप रही।

'खैर !' मेजर ने कहा, 'और तो कुछ नहीं, तुम्हारी बातें सुनने के बाद मेरा उस साधु से मिलना आवश्यक हो गया।

'आते ही कहाँ के पचड़े में पड़ गए !' आभा ने मुस्कराकर स्निग्ध स्वर में कहा, 'चलो न, कल नवदुर्गा के मेले हो आएँ। बहुत दिनों से रामू भैया भी कह रहे थे और माँजी की भी इच्छा है।'

'तो हो क्यों न आईं !' मेजर ने कहा।

'आपका इन्तजार जो था,' आभा शर्मा गई।

'तो चलो भाई, कल हो आते हैं !' मेजर ने कह दिया। यद्यपि वह मेले-ठेले की भीड़भाड़ को पसन्द नहीं करते थे और मन ही मन इस बार आभा को लेकर राजनगर के किले या किसी और एकान्त स्थान पर जाने का कार्यक्रम बनाकर आए थे; किन्तु नव-विवाहिता पत्नी के मन को ठेस भी नहीं पहुँचाना चाहते थे, अतः उन्होंने 'हाँ' तो कर दी, किन्तु मन उनका दूसरे ही ताने-बाने बुनता रहा।....

'यह साधु क्या सचमुच सनकी या पागल है, या उसे कहीं से पैसा मिल रहा है इस प्रचार के बदले में ? कहीं सचमुच देश भर में चन्द स्वार्थी लोग इस प्रचार में सफल हो जाएँ तो ?'

आगे वह नहीं सोच सके। इस 'तो' के जवाब में एक तसवीर उनके

मस्तिष्क में घूम गई—'समूचा देश जल रहा है। दुश्मन की फौजें उनके गाँव और नगर के गली-कूचों में मार्च कर रही हैं। उनके वहशी दरिन्दे छटपटाती हुई औरतों की दुर्गति करते हुए क्रूर अट्टहास कर रहे हैं। जवाहरलाल नेहरू और महात्मा गान्धी की तसवीरों तथा तिरंगे झण्डे को पैरों-तले रौंद रहे हैं! बच्चों को संगीनों की नोकों पर उछाला जा रहा है। सारा भारत कराह रहा है और मेजर के सामने उसकी माँ और आभा के साथ....'

'नहीं!' मेजर चिल्ला पड़े, 'मैं यह सब नहीं होने दूँगा, नहीं होने दूँगा। मेरा प्यारा देश....फिर गुलाम नहीं बनेगा।'

बगल में लेटी उनींदी-सी आभा ने आँखें खोलीं और फिर मूँद लीं। शायद पति युद्ध का सपना देखकर कुछ बड़बड़ा रहे थे—उसने सोचा।

३

गाँव से राजनगर जानेवाली कच्ची सड़क पर एक साथ अनेक बैलगाड़ियों के दौड़ने से बड़ा शोरगुल हो रहा था। पहियों की खड़खड़ाहट, बैलों की हुंकार और गाड़ीवानों की टिटकारियाँ उस लाल, ऊँची पहाड़ी से टकराकर प्रतिध्वनित हो रही थीं, जिस पर स्थित राजनगर का पुराना किला, गाँव से लेकर राजनगर तक, सड़क से बराबर दिखाई पड़ता रहता है।

नव दुर्गा के मेले को लक्ष्य करके दौड़ती बैलगाड़ियों में सबसे आगे-आगे जो गाड़ी दौड़ रही थी, उसे शौकिया हाँक रहे थे मेजर श्यामसिंह। गाड़ी में बैठे रामू, माँ और आभा कुछ तो गाड़ी की गति के कारण और कुछ अपनी-अपनी आन्तरिक प्रसन्नता के कारण हिचकोले खा रहे थे।

'न जाने कब से लगता आ रहा है यह नवदुर्गा का मेला,' सहसा

मेजर ने कहा, 'लेकिन लोगों की श्रद्धा और भक्ति में कमी नहीं आई ! मुझे याद है मैंने बचपन से इसी तरह की भीड़ इस मेले में आते देखी है ।'

'ये तो बड़े पुराने त्योहार हैं रे श्यामू !' माँ ने हँसकर कहा, 'तूने तो क्या, मैंने तक अपने बचपन में ऐसी ही भीड़ और भीड़ में ऐसी ही उमंग देखी है इस मौके पर ।'

'अच्छा भैया !' रामू ने सहसा मुस्कराकर पूछा, 'हमारे पूर्वजों ने जो ये तेतीस करोड़ देवी-देवता मान रक्खे हैं, इसका क्या मतलब है ? अगर मुसलमान का काम एक खुदा से चल जाता है, क्रिश्चियन एक गॉड को ही मानकर सन्तुष्ट है, तो हमारे यहाँ इतने सारे देवी-देवता क्यों ?'

'शायद इसका कारण यह रहा,' मेजर ने हँसकर कहा, 'कि हमारे पूर्वज उन लोगों से अधिक यथार्थवादी थे ।'

'क्या मतलब ?' रामू ने ताज्जुब से पूछा ।

'मतलब यह' मेजर ने कहा, 'कि वे प्रत्यक्ष प्रमाण को सबसे ज्यादा महत्व देते थे । उन्होंने देखा था कि इस दुनिया में कोई एक मनुष्य सर्व-गुण-सम्पन्न नहीं होता । किसी में एक गुण मिलता है, तो किसी में दूसरा । इसलिए हमारे पूर्वजों ने उस दुनिया के भी किसी एक देवता को सर्वगुण-सम्पन्न नहीं माना ।'

'इसीलिए एक-एक गुण के लिए उन्होंने एक-एक देवता की कल्पना कर डाली ?' रामू ने हँसकर पूछा ।

'बिलकुल !' मेजर ने गम्भीर स्वर में कहा, 'जैसे धन की देवी लक्ष्मी है, विद्या की देवी सरस्वती और शक्ति की प्रतीक हैं दुर्गा । आज देश को सबसे बड़ी जरूरत इसी दुर्गापूजा या शक्तिपूजा की है, जिससे भारत अपना खोया हुआ सम्मान फिर से हासिल कर सके ।'

'खैर !' रामू ने इस गम्भीर चर्चा को जैसे टालते हुए कहा, 'मैं तो कुछ और ही समझता हूँ ।'

'वह क्या ?' मेजर ने पूछा।

'ये जितने देवी-देवता हैं,' रामू ने गम्भीरता का पुट देते हुए कहा, 'सब किसी-न-किसी उत्सव या मेले-ठेले से जुड़े हुए हैं। इस बहाने मनुष्य को अपने दैनिक जीवन के दुख-दर्द से थोड़ी देर को छुट्टी तो मिल ही जाती है—देवी-देवता कहीं हों, चाहे न हों।'

मेजर को हँसी आ गई और वातावरण फिर हल्का-फुल्का हो गया। इस बीच माँ और आभा किसी दूसरी ही चर्चा में लगी थीं।

तभी रामू की दृष्टि पीछे दौड़ती उन बैलगाड़ियों पर जा पड़ी, जिनमें से अनेक पर कोई-न-कोई तरुण जोड़ा एक-दूसरे को प्रेम भरी उन्मुक्त मुस्कानों और अदाओं से सराबोर कर रहा था।

रामू का मन भी प्रसन्नता से भर उठा। अगले ही क्षण उसके मानस-पटल पर उदित हो रही थी नीलिमा, जिसका गम्भीर और नीले वस्त्रों से ढका यौवन, इन पीछे आती गाड़ियों के पार्श्व में दिखाई पड़नेवाले पश्चिम के हल्के नीले आकाश जैसा लग रहा था, और जो कल्पना में मुस्कराकर कह रही थी :

'डाक्टर के लिए झूठी लाज-शरम की मैं जरूरत नहीं समझती।....

'मेले में आइए, तो परिवार-नियोजन-केन्द्र पर आना न भूलिएगा।....

....आना न भूलिएगा !

....आना न भूलिएगा !'

रामू मुस्करा उठा; क्योंकि स्वयं उसके ओठ निःशब्द रूप से नीलिमा की ही बात दुहरा रहे थे।

'अच्छा, इतना आग्रह किसलिए किया उसने ?' रामू ने मानो अपने-आपसे चुपचाप पूछा। 'क्या महज परिवार-नियोजन के प्रचार के लिए ? नहीं, देश, समाज और शासन के लिए किया गया काम, ऊपर से कितनी ही लगन से किया जाए, 'दूसरों' के ही लिए होता है। व्यक्ति उसे धन, यश या अन्य किसी-न-किसी कामना से ही करता है। जैसे वह स्वयं—

उसके अन्तर्मन ने स्वीकार किया—मजदूरों का नेतृत्व करता है, भाषण देता है, हड़तालें कराता है ! क्यों ? क्या देश के लिए ? मजदूरों के लिए ? या पार्टी के लिए ? नहीं, सबसे अधिक 'अपने लिए', भले ही इस कार्य में गिरफ्तारी, सजा वगैरह का डर है; किन्तु इससे उसके अपने 'अहं' की तुष्टि होती है; 'मैं भी कभी याद किया जाऊँगा' यह सन्तोष होता है।

किन्तु जब वह मजदूरों से हड़ताल पर रहने का अनुरोध करता है, पार्टीवालों के साथ नगर में दूकानदारों से 'वन्द' आयोजित करने को कहता है, तब क्या उसके स्वर में वैसा आग्रह या अधिकारपूर्ण स्नेह रहता है, जैसा कल नीलिमा के स्वर में झलक उठा था ? नहीं ! तब ? तब क्या नीलिमा के स्वर में रामू के प्रति, उसके हृदय में उठनेवाली किन्हीं आकस्मिक भावनाओं की अनजानी अभिव्यक्ति हो उठी थी ? जरूर यही बात है—उसके मन ने कहा और वह एक अव्यक्त जोश से भर उठा।

'भैया लाओ,' वह उछलकर आगे आ गया, 'अब मैं हाँकूं ! भाभी 'बोर' हो रही हैं।'

गाड़ियों की खड़खड़ तथा पीछे के गाड़ीवालों के 'हेय-हेय' के शोर-गुल में 'बोर' शब्द माँ के कान में न पड़ा; पड़ता भी तो शायद वह स्नेह-मयी, किन्तु सरल ग्रामवासिनी माता उसका अर्थ न समझती ! किन्तु आभा के गाल लाल हो उठे। वह भी यद्यपि ज्यादा पढ़ी-लिखी न थी, परन्तु सम्पर्क के कारण इस प्रकार के शब्द समझने लगी थी।

'शैतान !' बुदबुदाते हुए मेजर मुस्कान के साथ पीछे, आभा और माँ के ठीक सामने जा बैठे और माँ से इस मेले के धार्मिक पहलू पर चर्चा में व्यस्त हो गए।

रामू के हाथों में पगहिया आते ही बैल भी मानो नवीन उत्साह से सर पर पैर रखकर दौड़ पड़े, जैसे उन्हें भी कोई स्नेहपूर्ण, रहस्यमय अन-जाना आकर्षण अपनी ओर खींच रहा हो।

रामू के सामने का दृश्य भी इस बार बदल गया। सामने उदित होत

लाल बाल रवि, उसकी सुनहरी-सी मनोरम किरणें और बैलों के पैरों और गाड़ी के नीचे अदृश्य होती पक्की सड़क। वह सड़क उसे एक क्षण को टेढ़ी-सी दिखती, फिर सीधी होती दिखलाई पड़ती। पेड़-पौधे, रास्ते में कहीं-कहीं सोया पड़ा कोई चौपाया—सभी पहले छोटे-से लगते, फिर बड़े हो जाते थे। कोई दो शिला-खण्ड पहले टूटे दिखलाई पड़ते, फिर आपस में गले मिलते-से लगते। उन्हें गले मिलते देख, रामू के होठों पर भी एक अस्पष्ट-सी कल्पना से मुस्कराहट खेल जाती।

'अपना इतना सौभाग्य कहाँ' वह सोचने लगा, 'शायद सब कुछ भ्रम ही हो!' नीलिमा के विषय में सब कुछ उसकी अपनी धारणा मात्र निकले। एक क्षण को मान लें कि वह उसके प्रति आकर्षण रखती भी हो, तो फिर उसके विचार? परिवार-नियोजन आदि के पक्ष में नीलिमा के सबल तर्क? रामू की पार्टी इन सबको महज 'प्रपोगैण्डा' समझती है। उसकी दृष्टि में यह सब सरकार का पलायनवाद है। पार्टी कहती है कि यह सरकार समाजवाद का नारा लगाने के बावजूद बीस वर्ष में हर नागरिक के बच्चों को उचित पोषण तथा निःशुल्क शिक्षा की गारण्टी भी नहीं दे सकी, और इसकी जड़ में पार्टी के अनुसार सरकार की ही अकर्मण्यता है, न कि जनसंख्या की वृद्धि।

नीलिमा से मिलने तक रामू भी पार्टी से सहमत था, किन्तु उससे मिलने पर उसे नीलिमा के तर्क भी सबल महसूस हुए। देश के मजदूर और किसान, बेचारे कितनी ही अधिक मेहनत क्यों न करें, यदि खानेवाले हजारों-लाखों की तादाद में बढ़ रहे हों, तो मेहनतकश हमेशा आधे पेट ही रहेगा, गरीबी कभी दूर न होगी।

इन दो विचारधाराओं के स्रोतों के बीच खड़ा रामू अजीब उलझन में पड़ गया है कल से। कल रात वह काफी देर तक बाबाजी से भी तर्क करता रहा था इसी विषय में; किन्तु किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सका।

बाबाजी! उनके स्मरण से एक अर्थ भरी मुस्कान खेल गई

ओठों पर। उसे याद आया, बाबाजी मिलने के पूर्व, उसके विचार ठीक अपने भैया के जैसे थे। इसी कारण प्रथम बार जब वह उत्सुकतावश बाबा के दर्शनार्थ गया, तो उनके कुछ शब्दों को सुनते ही नफरत से लौट पड़ा था।

'हमारे जवान अपना खून बहाकर जमीनें जीतते हैं,' बाबाजी कह रहे थे, 'और सरकार कलम की एक नोक से सब लौटा देती है। ऐसी हालत में फौज में भरती होना मूर्खता है। शास्त्रों में लिखा है कि जब राजा, धर्म से राज न कर रहा हो, तो....'

रामू के विचार उस समय ठीक इसके विपरीत थे। उसके अनुसार सेना के जवानों को राजनीति से दूर रहना चाहिए था और ताशकन्द-समझौते के अन्तर्गत पाकिस्तान को जीते हुए स्थान लौटाना उसकी दृष्टि में 'स्थायी शान्ति' का ही एक प्रयास था।

अतः रामू लौट आया था। फिर वह किसी हालत में उन बाबाजी के पास न जाता, यदि उसका एक आधुनिक विचारों का दोस्त स्वयं उसे वहाँ घसीट न ले जाता।

'आओ-आओ।' कहते हुए बाबा उठे, दोनों को कुटी के अन्दर ले गए, जहाँ चिमटा, कमण्डल के अतिरिक्त फर्श पर बीचों-बीच बनी एक वेदी में अंगारे दहक रहे थे। उन्हीं अंगारों पर रखी अलमूनियम की एक छोटी-सी केटली में चाय बनाकर बाबा ने स्वयं एक कप लेते हुए, इन दोनों को भी एक-एक कप पेश कर दिया।

चाय में कोई खास स्वाद न था, पर उससे ज्यादा स्वाद बाबा की बातों में था, यह रामू को आज स्वीकार करना पड़ा।

'भाई, शायद उस दिन तुमने मुझे गलत समझ लिया।' बाबा ने मुस्कराकर कहा था, 'आज मैं तुम्हें अपने विचार समझाता हूँ।'

उसकी उत्सुक दृष्टि का निरीक्षण करते हुए बाबाजी थोड़ा रुककर बोले, 'मैंने फौज में भरती का विरोध जरूर किया है और उसका कारण

भी उसी दिन बतला चुका हूँ, किन्तु देश-रक्षा का मैं विरोधी नहीं हूँ। मैं....'

'बाबाजी !' सदा के निर्भीक रामू ने टोक दिया, 'क्या फौज में भरती का विरोध और देशरक्षा का विरोध एक ही बात नहीं ?'

'पहले मेरे एक प्रश्न का उत्तर दो।' बाबा ने विचलित न होते हुए कहा, 'फौज रखी किस लिए जाती है ?'

'देश की रक्षा के लिए।' रामू ने कह दिया, 'और किस लिए !'

'गलत !' बाबा ने दृढ़ स्वर में कहा, 'यदि देशरक्षा ही सरकार का उद्देश्य होता, तो इतने भारी खर्च पर सेना और पुलिस रखने के बजाय, वह हथियार बटवाकर पूरी जनता को ही प्रशिक्षित करती।'

'फिर आप ही बताइए,' रामू ने कहा, 'क्यों रखी जाती है फौज और पुलिस ?'

'गवर्नमेण्ट का शासन बनाए रखने के लिए।' बाबा ने कहा, 'जनता की माँगों और न्यायपूर्ण आन्दोलनों को कुचलने के लिए।'

'तो आपका मतलब है', रामू ने कुछ अविश्वास से पूछा, 'कि जनता को किसी गवर्नमेण्ट की जरूरत ही नहीं ?'

'अमीर और गरीब का फर्क मिटा दो,' बाबा ने आत्मविश्वास की मुस्कान के आवरण में कहा, 'और गवर्नमेण्ट की जरूरत खुद ही खत्म हो जाती है।'

रामू के कान खड़े हो गए। उसने गरीबी देखी थी। पिताजी की असमय मृत्यु के बाद उसकी विधवा माँ ने किस तरह दूसरों का आटा पीस-पीसकर पढ़ाया है उन दोनों भाइयों को, इसे वह भूला नहीं है। यद्यपि माँ और उन दोनों भाइयों के सम्मिलित उद्योग के फलस्वरूप आज वे लोग खाते-पीते 'सुखी' हैं; किन्तु गाँव के दूसरे परिवारों में आज भी कितनी गरीबी है, यह उससे छिपा नहीं है। फैक्टरियों के, धूल और कोयले में काम करनेवाले कितने ही युवकों को टी० बी० हो जाती है, किन्तु परिवार

का और अपना पेट भरने के लिए, वे लोग उस काम को छोड़ भी नहीं सकते। दूसरी ओर फैक्टरी के मालिकों के यहाँ, जो कभी पानी भी हाथ से लेकर नहीं पीते, कारों और बँगलों की संख्या नित्य बढ़ती जाती है।

ऐसी स्थिति में बाबा ने, जो वस्तुतः एक भूतपूर्व राजनीतिक नेता थे, अपनी पार्टी का वर्णन कर उसे उसकी ओर आकर्षित कर लिया। कुछ दिनों में वह पार्टी का सक्रिय सदस्य बन गया। धीरे-धीरे उसने देखा कि कांग्रेस के ही घोषित लक्ष्यों—धर्म-निरपेक्षता, समाजवाद आदि—पर उसकी पार्टी भी जोर देती है; किन्तु तटस्थ विदेश-नीति, परिवार-नियोजन आदि कुछ विषयों पर कांग्रेस से भिन्न विचार रखती है।

इस पर भी रामू को कोई आपत्ति नहीं थी, यदि इसी बीच में नीलिमा से उसकी भेंट न हुई होती। उसके तर्कों ने गरीबों के प्रति सहानुभूति रखनेवाले रामू के विचारों में एक और मोड़ ला दिया। रामू को लगता है कि यदि पार्टी गरीबों की समर्थक है, तब तो उसे परिवार-नियोजन का समर्थन ही करना चाहिए।

इसी विषय पर कल रात-गए तक वह बाबा से भी विचार-विमर्श करता रहा; किन्तु निष्कर्ष कुछ न निकल सका। घण्टा भर माथा-पच्ची करने पर भी बाबा यही कहते रहे, 'हमारे देश में सम्पत्ति का वितरण जन-संख्या के आधार पर तो है नहीं। जिन देशों में बच्चों के लालन-पालन का बोझ सीधे सरकार पर है, वहाँ की बात अलग है। यहाँ तो अभी यह स्थिति है कि धनवान लोग कहते हैं, "हम दस क्यों न पैदा करें! हमारे भण्डार में कमी तो है नहीं। जो भूखों मर रहे हों; वे करें बर्थ-कण्ट्रोल।" ऐसी स्थिति में सरकार बेचारे गरीबों पर ही दो या तीन बच्चों की सीमा क्यों थोप रही है?'

इन बातों से रामू और भी उलझकर रह गया। बाबा की बातों का अर्थ तो यही है कि पार्टी सही मार्ग पर है। उसका अपना मन और विवेक

कहता है कि नीलिमा की बातों में भी तथ्य है। तब वह किस मत को सही माने ?

उँह ! लो, मेला आ गया। रामू ने सिर को एक झटका दिया और वर्तमान में लौट आया। उसने देखा, यात्रा समाप्त होने को है। धूप तेज हो चली है। सामने नवदुर्गा के मेले की भीड़भाड़, हिण्डोले, चकरियाँ पास आ रही हैं। कानों में पड़नेवाला शोरगुल भी बढ़ चला है।

'वह रहा हिण्डोला !' आभा ने बच्ची की तरह किलककर कहा, 'माँजी बैठिएगा न !'

'लो, और सुनो !' माँ स्नेह से हँस पड़ीं, 'अरे, तुम्हीं लोग झूलो। क्या हम जैसी बुढ़ियों के हिण्डोले में झूलने के दिन हैं ! मैं तो जरा वहाँ सत्संग करूँगी, जहाँ दुर्गा माता की कथा चल रही है। थोड़ी देर के लिए तुम्हें भी चलना पड़ेगा बहू !'

'जरूर माँजी !' आभा ने कहा।

'हट्ट ना ऽ ऽ ! हे ऽ ऽ य !' चिल्लाते हुए रामू ने अपनी गाड़ी सड़क के दाहिनी ओर कच्ची भूमि में उतार दी और तेजी से दौड़ाकर एक बड़े बरगद की छाया में खड़ी कर दी। देखते ही देखते दूसरी गाड़ियाँ भी वहीं आ-आकर खड़ी होने लगीं।

मेले में भीड़ बढ़ चली, क्योंकि कई लोग गाड़ियाँ गाड़ीवानों के हवाले कर सीधे ही मेले के चारों ओर बने, लकड़ियों के कच्चे दायरे में प्रविष्ट होने लगे। छोटे-छोटे बच्चे अपने-अपने माता-पिताओं को खिलौनों की दूकानों, हिण्डोलों, चकरियों की ओर खींचते शोर कर रहे थे। कुछ बूढ़ी स्त्रियाँ धार्मिक कथा-प्रवचनवाले पण्डाल की ओर उमड़ रही थीं। कुछ 'शिक्षित' युवक परिवार-नियोजन-केन्द्र की ओर जा रहे थे, और कुछ अशिक्षित भी महज उत्सुकतावश।

इधर मेले से बाहर पेड़ के नीचे गाड़ीवान तथा वे लोग, जो अपनी गाड़ियाँ खुद हाँककर लाए थे, गाड़ियाँ खोलने तथा बैलों को चारा-भूसा

डालने में लगे थे। 'रामू ने भी बैलों को पेड़ के तने से बाँध, उन्हें चारा डालकर हाथ झाड़ते हुए कहा, 'माँ, कुछ पेट-पूजा हो जाए—मेले में घुसने से पहले।'

'हाँ-हाँ, क्यों नहीं!' कहते हुए माँ ने आभा के हाथ से एक पोटली लेकर उसे खोला और उसमें से रोटी, अचार, शक्कर वगैरह निकालकर पेड़ के नीचे रखना शुरू कर दिया।

'अपन तो भई, हाथ-मुँह धोकर आते हैं।' कहते हुए मेजर ने लोटा भर पानी लिया और एक तरफ को चले गए।

'भाभी, तुम भी धो आओ!' रामू ने धीरे से कहा, और माँ की पीठ इधर देख, आभा ने उसको चिकोटी काटने का उपक्रम किया, किन्तु रामू हँसते हुए सतर्कता से कुछ दूर खिसक गया।

'ठहरो, मैं माँ से कहती हूँ।' आभा बनावटी क्रोध में मुस्कान को छिपाकर बुदबुदाई।

रामू इस झूठी धमकी पर कुछ घबराया। उसने झट माँ को दूसरी चर्चा में लगाने के विचार से इधर-उधर देखा, तो सामने एक गाड़ी से उतरती हुई परमेश्वरी 'चाची' नजर आ गईं।

'अररर, चाची! आओ-आओ।' रामू उत्साह दिखाकर चिल्ला पड़ा, 'माँ, लो, चाची भी आ गईं।'

उसके इस आकस्मिक उत्साह का यथार्थ कारण न समझकर माँ और चाची दोनों हँस पड़ीं।

'तू बस, बच्चा ही रहा रामू!' चाची हँसती हुई समीप आकर बोलीं, 'इतना बड़ा हो गया, मगर आदतें न बदलीं।'

'आदतें? हाँ-हाँ!' रामू बात टालते हुए हँसी के साथ एकदम कह गया, 'वह भला, कैसे बदल सकती हैं चाची! बच्चा तो मैं जिन्दगी भर रहूँगा तुम लोगों के सामने। फिर, बच्चा तो मैं भाभी के लिए भी हूँ, जब तक.......'

'जब तक क्या ?' इस बार माँ ने उत्सुकता से पूछा ।

'जब तक उन्हें सचमुच का कोई बच्चा भगवान् नहीं देता....।' आगे के शब्द और आभा की लज्जा एवं क्रोध भरी प्रतिक्रिया माँ और चाची के ठहाकों में डूब गई ।

'किस बात पर हँसी हो रही है भई ?' पेड़ के एक ओर से मेजर ने आते हुए उत्सुकता से पूछा, फिर चाची को देखकर मुस्कराए, 'अरे, चाची भी हैं ! राम-राम चाची !'

'जीते रहो बेटा !' चाची मुस्कान के साथ बोलीं, 'यह रामू बात ही कुछ ऐसी कर बैठता है कि हँसी नहीं रुकती ।'

'क्या हुआ ?' मेजर की उत्सुकता और बढ़ गई ।

'वैसे बात ठीक भी है ।' चाची ने उनकी उत्सुकता का मजा लेते हुए कहा, 'अब सचमुच बहू की गोद भरनी चाहिए ।'

'तो यह बात थी !' मेजर ने सिर ठोककर रामू को घूरा, 'धन्य महाप्रभु !'

'धन्य क्या ?' रामू को भी मजा आया, 'विधेयक प्रस्तुत हुआ और चाची के निर्णायक मत से पास भी हो गया ।'

'अच्छा-अच्छा, अब छोड़ो भी ।' मेजर ने बात बदल दी, 'चाची आओ, कलेवा कर लो ।'

'क्यों नहीं ! लेकिन कुछ रूखा-सूखा मेरे पास भी है । ले आऊँ !' कहती चाची चलने लगीं ।

'अरे वाह ! नेकी और पूछ-पूछ, चाची !' रामू ने खुशी दिखलाते हुए कहा, 'जल्दी ले आओ । अब पेट में चूहों ने उछलकूद मचा दी है ।'

चाची अपना झोला लेकर आईं, तभी 'अरे रामू ! श्याऽमू! भई वाह ! तुम लोग यहाँ हो ?' कहते हुए राधे भैया, जगत मामा वगैरह भी आ पहुँचे ।

औपचारिक बातों के बाद सबने अपने-अपने साथ लाया हुआ कलेवा

निकाला और उसी पेड़ के नीचे सामूहिक रूप से गोल घेरे में बैठकर बीच में परोसकर हँसी-कहकहों के बीच 'भोग' लगाना शुरू कर दिया। इस समय आर्थिक या अन्य किसी भेद का नामो-निशान नहीं था इन लोगों में। छोटे-बड़े, और गाँव के माने हुए रिश्तों की मर्यादा जरूर थी, किन्तु इस मर्यादा के बावजूद उस प्रीतिपूर्ण सहभोज को देखकर कोई भी कह सकता था कि भारत में 'प्राकृतिक समाजवाद' यदि कहीं है, तो उसके गाँवों में।

४

डॉ० नीलिमा ने अपने परिवार के सदस्यों की सहमति से ही अपना जीवन इस सेवाकार्य में अर्पित कर रखा था। वह फिलहाल विवाह-शादी करके देश की जनसंख्या में वृद्धि करने के पक्ष में नहीं थी। जो लोग अविवाहित न रह सकते हों, उनके लिए वह परिवार-नियोजन को उत्तम मानती थी और उसकी रुचि देखकर उसे यही प्रचार कार्य सौंप भी दिया गया था।

परिवार-नियोजन के प्रचार में उसने नए-नए स्थान देखे थे; लोगों की गरीबी देखी थी, और उसकी यह धारणा पुष्ट होती जाती थी कि जब तक धार्मिक रूढ़ियों से मुक्त होकर जनता परिवार-नियोजन को न अपनाएगी, देश गरीब ही रहेगा।

आज गाँव के इस मेले में भी उसे आश्चर्य हुआ यह देखकर कि कुछ ग्रामीण स्त्रियाँ बाहर लगे चित्रों से आकृष्ट होकर पहले तो उसके पण्डाल में चली आईं, किन्तु उससे उन चित्रों का मतलब जानते ही तत्काल भागने लगीं। उनका खयाल था कि यहाँ जबरदस्ती उनका 'आपरेशन' कर दिया जाएगा।

किन्तु नीलिमा के हँसमुख चेहरे और मधुर स्वर में किए गए उसके तर्कों ने उन महिलाओं को प्रभावित कर लिया।

'भगवान् ही बच्चे देते हैं और उन्हें रोकने का अधिकार हमें नहीं है, यही तो मानती हैं न आप?' उसने कहा, 'किन्तु भगवान् तो बीमारियाँ भी देते हैं और दवाएँ बनाने की बुद्धि भी भगवान् ही देते हैं! फिर जब बीमार को दवा देना नास्तिकता नहीं है, तो बच्चा बन्द करने का उपाय करना नास्तिकता कैसे हुई?'

इसके बाद उसने देश की गरीबी, भुखमरी, ज्यादा जनसंख्या होने से बेकारी फैलने की चर्चा की और महिलाएँ अब पूरी तरह नीलिमा के प्रभाव में थीं।

'मिस नीलिमा ऽऽ! टी टाइम, प्लीज़।' बगल के पुरुषोंवाले कक्ष से डाक्टर अखिल का सुन्दर चेहरा झाँकता दिखाई पड़ा। कमजोर दृष्टि-वाला सुनहरे फ्रेम का चश्मा उनकी कलाकारों जैसी नुकीली नाक पर खासा फब रहा था।

'शुक्रिया! आप चाय लीजिए। मैं अभी आई।' कहकर नीलिमा फिर महिलाओं की तरफ देखकर अपने वक्तव्य को समाप्त करते हुए बोली, 'परिवार-नियोजन क्यों जरूरी है, यह समझ में आ जाने पर साधन बहुत-से हो सकते हैं। जैसे किसी को आपरेशन न कराना हो, तो 'लूप' लगाए जाते हैं; आपरेशन भी औरतों से अधिक सरल मर्दों का होता है। इस सम्बन्ध में आप सब, तीन बजे के बाद आ सकती हैं; लेकिन बड़े बच्चों को तब साथ न लाइए और आपके पतिदेव भी साथ में रहें, तो अच्छा होगा।'

'मिस नीलिमा ऽ!' बगल के कक्ष से फिर स्वर उठा।

'आई बाबा, आई।' कहती हुई नीलिमा इस बार सचमुच चलने को उद्यत हुई।

'अच्छा, डाक्टरनी बाई, हम लोग जरूर आएँगी तीन बजे।' और

महिलाएँ अभिवादन कर बाहर निकल गईं। नीलिमा भी द्वार आदि बन्द कर बगल के कमरे में चली गई।

'आइए, मिस नीलिमा!' एक छोटी-सी टेबिल पर चाय-नाश्ता रखे डाक्टर अखिल उसी की प्रतीक्षा कर रहे थे। लबालब भरा उनका चाय का प्याला यही बतला रहा था कि नीलिमा के कह देने पर भी उन्होंने उसकी अनुपस्थिति में उसे मुँह से नहीं लगाया था।

'ओह! आप मेरे लिए बैठे ही रहे डाक्टर!' नीलिमा ने देर हो जाने पर कुछ लज्जित होते हुए कहा और डाक्टर अखिल के पास पड़ी दूसरी खाली कुर्सी पर बैठ गई।

डाक्टर अखिल की इसी आदत पर नीलिमा को खीझ होती है। कालेज से लेकर सर्विस तक में दोनों साथ रहे हैं, इसका यह मतलब तो नहीं कि यह चाय, लंच आदि जरा-जरा-से कामों में भी उसकी प्रतीक्षा करते बैठे रहें! और, सबसे बुरी बात यह कि इस प्रतीक्षा में चाय, भोजन वगैरह ठण्डे भी हो जाएँ, तो वह शिकायत का एक शब्द भी नीलिमा से नहीं कहते। इससे वह अपने को एक विचित्र-सी लज्जित अवस्था में फँसा हुआ पाती है।

आज भी ऐसा ही हुआ, जब उसके खेद-प्रकाश पर भी डाक्टर अखिल उदासीन ही दिखे।

'इसमें संकोच की क्या बात है नीलिमाजी?' डाक्टर अखिल ने नीलिमा के लगभग साथ ही चाय का प्याला उठाकर चुस्की लेते हुए कहा, 'आपने अपने किसी निजी काम से तो देर लगाई नहीं। आप अपना कर्त्तव्य ही कर रही थीं।'

'और यह जानते हुए भी आपने मेरी प्रतीक्षा में अपनी चाय ठण्डी कर ली!' नीलिमा कुछ शिकायत के-से स्वर में बोली।

'मैं भी अपना कर्त्तव्य कर रहा था।' डाक्टर अखिल ने कहा और दोनों की सम्मिलित हँसी से उस कक्ष का वातावरण झंकृत हो उठा।

हँसी रुकने पर डाक्टर के इस कथन का अर्थ नीलिमा पूछना ही चाहती थी कि एक चपरासी ने अन्दर आकर कहा—'डाक्टरनी बाई, कुछ लोग आपसे मिलने आए हैं।'

'कौन लोग हैं ?'

'कोई परिवार-नियोजन वाले होंगे।' डॉक्टर अखिल ने मुस्कराते हुए कहा।

'नहीं साहब, डाक्टरनी बाई का नाम लेकर कह रहे थे कि इनसे मिलने आए हैं। दो बाबू हैं, एक बाई हैं।' चपरासी ने कहा।

'ओह !' नीलिमा को कल बस से आते हुए रास्ते में मिले राजनीतिक वाद-विवाद में व्यस्त दो युवक याद आ गए। बड़े दिलचस्प लगे थे उसे वे दोनों।

'हाँ-हाँ, मैं उन्हें जानती हूँ।' नीलिमा के मुँह से, डाक्टर अखिल को चकित करते हुए ये शब्द निकल गए, 'जाओ, उन्हें भेज दो और उनके लिए चाय का इन्तजाम करो।'

'कौन हैं, नीलिमाजी ?' डाक्टर अखिल पूछ बैठे। वह तो समझते थे, नीलिमा के सभी मिलने-जुलनेवालों को वह भी समान रूप से जानते हैं।

'हैं, दो सफर के साथी !' नीलिमा यह कहते हुए हँस पड़ी।

इसके साथ ही अभिवादन करते हुए मेजर श्यामसिंह, आभा और रामू अन्दर आ गए। नीलिमा ने उठकर प्रसन्नतापूर्वक उनका स्वागत किया तथा डाक्टर अखिल और उन तीनों का परस्पर परिचय कराया। सब बैठ गए और इसी बीच में चपरासी, नवागन्तुकों के लिए चाय तथा एक बड़ी-सी प्लेट में नाश्ता ले आया।

'इस सबकी क्या जरूरत थी बहिनजी !' आभा ने संकोच व्यक्त किया।

'संकोच करने की कोई जरूरत नहीं।' नीलिमा ने मधुर मुस्कान के

साथ कहा, 'मैं तो पहले से ही आप लोगों की राह देख रही थी। मगर दो बज गए तो मुझे आशा न रही।'

'बात यह है नीलिमाजी !' रामू ने मुग्ध दृष्टि से नीलिमा की ओर देखते हुए शायद कैफियत देनी चाही, 'कि मेले में तो हम लोग सुबह दस बजे ही आ गए थे, मगर हम लोगों की फैमिली-प्लानिंग वाला काम तो था नहीं, अतः आपके 'ड्यूटी अवर्स' को बचाकर ही हम लोग आए।'

'यह बात थी !' नीलिमा की उन्मुक्त हँसी फूट पड़ी। जाने क्यों उसे उन ग्रामीण औरतों की याद आ गई, जो जबरदस्ती आपरेशन किए जाने के भय से खिसकना चाहती थीं।

'क्यों ?' मेजर ने उत्सुकता के साथ पूछा, 'हँस क्यों रही हैं आप डाक्टर ?'

'मुझे रामूजी की उक्ति से उन महिलाओं की याद हो आई,' नीलिमा ने मुश्किल से अपनी हँसी रोककर कहा, 'जो यह पता चलने पर कि यह परिवार-नियोजन का शिविर है, भागने को उद्यत हो उठी थीं !'

इस उपमा पर मेजर कुछ लज्जित हुए और मन ही मन रामू को गालियाँ देते हुए झेंप मिटाने के लिए मुस्कराकर बोले, 'हमारे साथ यह बात नहीं मिस नीलिमा ! यद्यपि नव-विवाहित होने के नाते मैं अभी बर्थ-कण्ट्रोल वगैरह की झंझट से दूर हूँ, फिर भी आपके पास देर से आने का कारण यह रहा कि वाइफ को काफी देर माँ के साथ कीर्त्तन में बैठना पड़ा। फिर माताजी को वहीं जमकर अखण्ड समाधि लगाए देख, मैं उनसे पूछकर इन्हें बुला लाया। हिण्डोला, चकरी, दंगल आदि का आनन्द लेते हुए....'

'झेंप की कोई बात नहीं मेजर !' इस बार डाक्टर अखिल भी मुखरित हो मुस्कराने लगे।

'लेकिन मेजर साहब !' नीलिमा ने मेजर की बात के पूर्वार्ध को

महत्त्व देते हुए कहा, 'नव-विवाहितों के लिए परिवार-नियोजन में झंझट क्या है ?'

'अरे, और क्या ?' मेजर अपने विचार स्पष्ट रूप से व्यक्त कर बैठे, 'शुरू से ही नवदम्पति पर ये सब बन्धन क्यों लाद दिए जाएँ ?'

'क्यों मेजर साहब,' नीलिमा ने भी अपने स्वभाव के अनुकूल दो टूक बात कह दी, 'बन्धन क्या है ? पहले ही दिन से काण्डम वगैरह का प्रयोग ज्यादा बड़ा बन्धन है या शादी के बाद साल भर में ही प्रेमी-प्रेमिका की आनन्दपूर्ण स्थिति से वंचित होकर 'माँ-बाप' बन जाना ?'

मेजर को एक-ब-एक जवाब न सूझा। कल से अब तक यह दूसरा मौका था, जब नीलिमा ने उन्हें निरुत्तर किया था। अद्भुत है यह लड़की, इसकी वाक्प्रतिभा, इसकी स्पष्ट विचारधारा ! मेजर को लगा, यदि रामू जैसे उद्धत वृषभ को बाँधनेवाली कोई रस्सी हो सकती है तो ऐसी ही पत्नी !

इधर आभा को आज तक ऐसे समाज में उठने-बैठने का कभी अवसर नहीं मिला था, जहाँ इतनी खुलकर बातें की जाती हों। यद्यपि काण्डम, बर्थ-कण्ट्रोल जैसे शब्दों का उच्चारण उसके लिए सहज ग्राह्य न था, तथापि शादी, बच्चे आदि के उल्लेख से उसको स्वाभाविक बुद्धि से चर्चा का विषय छिपा न रह सका। वह एक ओर तो दाँतों तले उँगली दबाकर मन ही मन कह रही थी, 'हाय राम ! कितनी बेसरम होती हैं ये शहर की डाक्टरनियाँ ! पराए मर्दों के सामने ऐसी बातें ?' और दूसरी ओर लज्जा से बचने के लिए इस चल रहे विषय को बदल देने को भी उत्सुक थी। आखिर उसी ने इसका प्रयत्न किया—'मगर बहिनजी !' उसने हँसकर कहा, 'उन औरतों के भागने पर तो बहुत हँसी आई होगी आपको ?'

'उन पर हँसने की नहीं, उन्हें प्यार से समझाने की जरूरत है,' नीलिमा ने कहा और संक्षेप में उस घटना का वर्णन कर दिया।

परन्तु इस घटना से रामू के मन में घूम रहे पार्टी और बाबाजी के तर्कों को ही बल मिला। यदि पार्टी सही न होती, तो पार्टी-वार्टी से अनजान सरल हृदय जनता भी क्यों लगभग वैसा ही रुख अपनाती, जैसा परिवार-नियोजन के प्रति पार्टी ने अपना रखा था—उसने सोचा, और एक बार पार्टी-विरोधी दिशा में जाते-जाते उसके विचार फिर पार्टी-समर्थक दिशा में मुड़ गए।

'इस घटना से साफ हो जाता है,' रामू कहे बिना न रह सका, 'कि ग्रामीण जनता में परिवार-नियोजन-विरोधी भावनाएँ कितनी तीव्र हैं।'

'इससे इन्कार तो नहीं किया जा सकता,' डाक्टर अखिल ने स्वीकार किया, 'कि जनता ने अभी तक इस योजना को उतना हार्दिक समर्थन नहीं दिया है, जितना अपेक्षित था। इसके लिए एक तरफ जनता की रूढ़ियाँ और अशिक्षा जितनी उत्तरदायी हैं, दूसरी तरफ कुछ राजनीतिक दल तथा नेता भी उससे कम जिम्मेदार नहीं हैं।'

रामू को मन ही मन एक आघात-सा लगा। उसकी हिम्मत न हुई यह कहने की कि वह स्वयं एक ऐसे ही राजनीतिक दल का सदस्य है। किन्तु मन की बात किसी-न-किसी रूप में वाणी से निस्सृत हो ही जाती है।

'राजनीतिक दलों की अपनी-अपनी घोषित नीति होती है डाक्टर साहब!' रामू कह उठा, 'उसी के अनुसार वह कार्य एवं प्रचार करते हैं। विचार-स्वातंत्र्य लोकतंत्र का मूल मंत्र है।'

'बेशक है,' डाक्टर अखिल की आँखें सुनहरे फ्रेम के चश्मे के पीछे से चमक उठीं, 'परन्तु आज तो विचार-स्वातंत्र्य के नाम पर शत्रु देशों से प्रेरणा ली जा रही है। लोकतंत्र का नाम ले-लेकर लोकतंत्र को ही नष्ट कर देने के षड्यंत्र रचे जा रहे हैं। क्या यह स्थिति, किसी भी दशा में बर्दाश्त की जा सकती है?'

'हरगिज़ नहीं!' मेजर की भुजाएँ फड़क उठीं। उन्हें याद आ गया सन् १९६२ का वह दृश्य, जब विचार-स्वातंत्र्य के नाम पर एक ओर कुछ

दल संसद में श्री नेहरू और उनकी सरकार पर आलोचना के 'गोले' बरसा रहे थे और दूसरी ओर देश की उत्तरी सीमा पर चीन, बन्दूकों और राइफलों से गोलियाँ बरसा रहा था। एक ओर देशभक्त जनता अपने सैनिकों के लिए अपना खून, अपना सोना-चाँदी दे रही थी, दूसरी ओर कुछ अज्ञात गिरोह उन्हीं सैनिकों से लदी रेलगाड़ियों को उलट देने के लिए पटरियाँ उखाड़ रहे थे!

'ऐसे देशद्रोहियों को तो गोली मार देनी चाहिए।' मेजर गरज उठे।

'देशद्रोही जन्मजात नहीं होते।' रामू ने तीव्र प्रतिवाद किया, 'परिस्थितियाँ उन्हें देशद्रोही बना देती हैं। देशद्रोह उन्हें उनकी गरीबी सिखला देती है।'

'माफ कीजिए,' डॉक्टर अखिल यद्यपि शान्त प्रकृति के, और वाद-विवाद से दूर रहनेवाले व्यक्ति थे, किन्तु वह कहे बिना न रह सके, 'गरीब की लड़ाई अमीर से तो हो सकती है। परन्तु किसी गरीब की अपने देश से कभी लड़ाई हो ही नहीं सकती। जो पार्टी गरीबों का जितना अधिक नाम लेती है, वह गरीबी बनाए रखने की उतनी ही अधिक इच्छुक होती है, जिससे कि वह गरीबों का नाम लेकर अधिक से अधिक 'वोट' प्राप्त कर सके।'

'जिनका पेट भरा है,' रामू ने मुस्कराकर व्यंग्य से कहा, 'उनके लिए फलसफा झाड़ना बहुत सरल है। यदि पार्टियाँ गरीबी बनाए रखने की इच्छुक हैं, तो शायद मरीजों की जेब खाली करा लेनेवाले डॉक्टर्स गरीबी मिटाने के ज्यादा इच्छुक होते होंगे।'

उत्तर में डॉक्टर अखिल केवल मुस्कराकर रह गए। उनके चेहरे पर क्रोध का कोई चिह्न नहीं था।

'सॉरी, मि० रामू!' इस बार नीलिमा का तेज और उत्तेजित स्वर सुनाई पड़ा, 'आपने डॉ० अखिल पर जो बेबुनियाद रिमार्क कसा है, वह सिर्फ आपके अज्ञान का सूचक है। आप नहीं जानते कि डॉक्टर अखिल

ने स्वयं गरीबी से संघर्ष करते हुए ही इतनी प्रगति की है। 'गरीब-गरीब' का आठों पहर अखण्ड कीर्त्तन करनेवाले आपके कई नेताओं को मैंने चार-चार पैसे के लिए गरीब रिक्शेवालों से भों-भों करते देखा है, और दूसरी ओर यह भी देखा है कि डॉ० अखिल बिना किसी शोरगुल या प्रचार के स्वयं सरकारी डॉक्टर होते हुए भी रोज सुबह तथा छुट्टी के दिन, मुफ्त अपने घर पर रोगियों को देखते हैं। यदि कोई रोगी दवाएँ खरीदने में असमर्थ दीखता है, तो ये उसे अपनी जेब से सहायता तक दे डालते हैं....'

'आह, नीलिमा! बस करो।' इस बार डॉ० अखिल के चेहरे पर ऊब के चिह्न उभरे, 'मैंने तुमसे हमेशा कहा है कि मेरे जीवन के इस पहलू को अँधेरे में ही रहने दो। हो सकता है, ऐसी प्रशंसा से मुझमें अहंकार पैदा हो जाए और मैं अपने आदर्श को भुला बैठूं!'

रामू, मेजर और आभा तीनों पर ही डॉ० अखिल के इस कथन का गहरा प्रभाव पड़ा। रामू को अपनी पिछली बात स्वयं हलके स्तर की लगने लगी; किन्तु तीर हाथ से निकल चुका था और सिर्फ लज्जा उसे खेद व्यक्त करने या माफी माँगने से रोक रही थी।

'धन्य हैं आप डॉक्टर साहब!' मेजर ने अपने भाई की उक्ति पर स्वयं लज्जा का अनुभव करते हुए अखिल से कह दिया, 'जिन्हें अपनी निन्दा सुनकर नहीं, बल्कि अपनी प्रशंसा सुनकर कष्ट होता है।'

'काश! सभी डॉक्टर्स आप जैसे होते।' रोकते-रोकते भी रामू के मुँह से निकल गया, मानो इन शब्दों में उसने खेद भी व्यक्त कर दिया और अपनी कैफियत भी दे दी कि उसका कथन पूरे वर्ग के लिए था, न कि किसी व्यक्ति-विशेष के लिए।

मेजर को रामू का यह रुख अखरा, मगर वह बराबरी के भाई से ज्यादा कुछ कहना तथा उससे प्रत्युत्तर सुनना अपमानजनक समझ, चुप ही रहे।

•

इसके बाद अखिल, आभा तथा मेजर ने वातावरण में उत्पन्न कटुता और तनाव को दूर करने की बहुत चेष्टा की, परन्तु अब यह मुश्किल था।

नीलिमा और रामू दोनों ही उन्मन तथा अन्यमनस्क हो चुके थे, और वे फिर हँस-बोल न सके।

वहाँ से लौटते समय शिविर से वाहर कुछ दूर आकर मेजर ने कहा, 'डॉ० अखिल सचमुच प्रचार से दूर एक उदार और दयालु जनसेवक हैं।'

'अपना-अपना ढंग है जनसेवा का।' रामू ने मानो भैया को नहीं, स्वयं अपने को समझाते हुए कहा, और वे लोग चुपचाप उस पण्डाल की ओर बढ़ गए, जहाँ उन्होंने माँ को कीर्त्तन-भजन में व्यस्त छोड़ा था।

धूप ढल रही थी और शायद ढल रहा था रामू का वह उत्साह, जो नीलिमा की कल की बातों से उसके विषय में रामू के अन्तर्मन में पैदा हो गया था।

५

डॉ० नीलिमा का परिवार एक मध्यम वर्गीय ब्राह्मण परिवार है। उसके पिता शर्माजी सुलझे हुए आधुनिक विचारों के एक रिटायर्ड प्रोफेसर हैं। खानपान सम्बन्धी तथा दूसरी संकीर्णताओं से उन्हें शुरू से घृणा रही है। शिकार का शौक उन्हें जवानी से ही रहा और अपनी बन्दूक से मारे हुए शेर-चीतों का मांस विशेष रूप से पसन्द था। आज भी नीलिमा के घर के कमरों की दीवारों पर जहाँ-तहाँ लटकती शेर, भालू और हिरन की खालें तथा उसके पिता की बैठक में टँगी उनकी पुरानी अमेरिकन बन्दूक उनकी तरुणाई के इसी शौक की कहानी कह रही है।

नीलिमा की पुराने विचारों की माँ जब विवाह के बाद इस घर में आयी, तो कुछ समय तक पति-पत्नी में विचारों का संघर्ष चला, अन्त

में जैसा सदियों से होता आया है, यहाँ भी नारी को ही झुकना पड़ा और पति के आधुनिक आचार-विचार को अपनाना पड़ा। पत्नी के विचारों को मान लेना या समान महत्व दे देना शायद शर्माजी की 'आधुनिकता' की परिभाषा में शामिल नहीं था।

फिर भी शर्माजी की सज्जनता पर किसी को सन्देह नहीं हो सकता। वह स्वयं राजनीति के प्रोफेसर होकर भी सदैव सक्रिय राजनीति से दूर रहे तथा व्यक्तिगत विचार-स्वातंत्र्य को किसी भी दल, पन्थ या सम्प्रदाय की मानसिक गुलामी से ज्यादा अच्छा समझते हैं।

शर्माजी ने नीलिमा को भी बचपन से हर तरह की आजादी दे रखी है और उसे दूसरों की बुद्धि की ओर ताकने के बजाय, स्वयं अपने ढंग से सोचने को प्रेरित किया है।

नीलिमा ने जब बी० एस-सी० प्रथम वर्ष में फर्स्ट आने के बाद मेडीकल कालेज में जाने की इच्छा व्यक्त की, तब उसके पिता बेहद प्रसन्न हुए।

नीलिमा की अवस्था अधिक होते देख, जब माँ उसकी शादी के विषय में चिन्तित होने लगीं, तब शर्माजी ने एकाध बार नीलिमा के सामने ही लापरवाही की मुस्कान से कन्धे उचकाते हुए कह दिया, 'भई, शादी नीलिमा की होनी है, मेरी नहीं। जो पूछना हो, उसी से पूछ लो।'

नीलिमा की इच्छा फिलहाल अविवाहित रहकर अध्ययन करने तथा उसके बाद कुछ समय नौकरी करने की जानकर उन्होंने उसे कहीं भी जल्दबाजी में शादी कर लेने पर बाध्य नहीं किया।

डॉ० अखिल का, जो अध्ययन तथा नौकरी में भी संयोग से नीलिमा का साथी रहा, घर में अधिक आना-जाना भी शर्माजी तथा उनकी पत्नी को कभी नहीं अखरा। वे दोनों सम्भवतः यह सोचते थे कि अच्छा ही हो, यदि ये दोनों साथी प्रणय-सूत्र में बँधकर जीवन-साथी बन जाएँ। यद्यपि डॉ अखिल वैश्य था और बिना माँ-बाप का लड़का था, जिसको शिक्षा-

दीक्षा का श्रेय उसके एक रिश्ते के मामाजी को और सरकार से मिलने-वाले वजीफों को था, फिर भी उसका हँसमुख शान्त स्वभाव शर्मा-दम्पति को पसन्द था, और मनुष्य का स्वभाव ही उसे ऊँच या नीच बनाता है।

इतने पर भी शर्माजी को या उनकी पत्नी को पुत्री की ओर से ऐसा कोई संकेत न मिला था अब तक, जिसके आधार पर कुछ तय किया जा सकता।

और, नीलिमा स्वयं क्या सोचती है, काश, वे यह जान पाते। नीलिमा इन सब झंझटों से तटस्थ-सी है अभी। वह बाईस वर्ष की है और पढ़ाई या काम की व्यस्तता में अब तक उसे इस पहलू पर सोचने-विचारने का मानो वक्त ही नहीं मिला।

पिता के स्वभाव से सहज प्राप्त आधुनिकता तथा यथार्थवाद के बावजूद जीवन के विषय में वह भावुकता अभी उसमें है, जो उसकी अवस्था के प्रायः हर युवक-युवती में होती है। वह कभी उचित इलाज के अभाव में मर जानेवाले देश के हजारों गरीबों की सेवा में जीवन बिता देने की बात सोचती है, तो कभी अपने प्यारे माता-पिता को खुश रखने और उन्हीं के साथ आयु बिता देने का निश्चय करती है।

माता-पिता की कभी मृत्यु भी हो सकती है, और स्वयं 'अपूर्ण' रह-कर देशसेवा भी नहीं की जा सकती, इन समस्याओं में उसका भोला मन उलझता ही नहीं अभी।

डॉ० अखिल उसके लिए एक 'मित्र' हैं, अच्छे 'साथी' हैं, और कुछ नहीं। उनके साथ वह काम के घण्टों में भी रहती है और कभी-कभी अवकाश के क्षणों में भी उनके साथ घूमने-घामने या सिनेमा वगैरह देखने निकल जाती है; किन्तु बस, उसी तरह, जिस तरह यदि डॉ० अखिल उसकी कोई 'सहेली' होते, तो वह जाती उनके साथ।

आज भी वे दोनों नवदुर्गा के मेले का लम्बा काम समाप्त होने पर थकान दूर करने के विचार से राजनगर का किला देखने चले आए हैं

यद्यपि इस किले में उनके लिए अनदेखा कुछ नहीं। फिर भी लम्बे काम के बाद आराम के क्षणों में, देखे हुए स्थलों पर पुनः घूमने का मजा भी कुछ और ही होता है।

सदा की तरह आज भी नीलिमा के साथ घूमते हुए डॉ० अखिल बहुत प्रसन्न चित्त हैं; किन्तु न जाने क्यों, अभी लौटते समय वह हमेशा की तरह फिर उदास हो जाएँगे, यह नीलिमा जानती है। वह बहुत दिनों से इसका कारण उनसे पूछने का विचार कर रही है।

क्यों ? आखिर क्यों उनकी शाश्वत उदासी नीलिमा के पास होने पर कुछ देर के लिए गायब हो जाती है और वह हँस-हँसकर बातें करने लगते हैं, किन्तु उससे दूर होते हुए उनकी उदासी जैसे फिर लौट आती है।

'वह देखो नीलिमा', डॉक्टर एक बुर्ज पर से, पास ही खड़ी नीलिमा के कोमल कन्धे पर दाहिना हाथ रख, बाएँ हाथ से दूर नीचे कुछ दिखाते हुए बोले, 'दूर वे दोनों शिलाखंड कैसे मौन, चुपचाप एक-दूसरे के सामने खड़े हैं।'

'हाँ, फिर ?' नीलिमा ने भोलेपन की उत्सुकता से पूछा।

'जैसे एक नदी के दो किनारे हों, जो एक साथ रहते हुए भी कभी मिल नहीं पाते।'

'मैं कुछ नहीं समझी।' नीलिमा ने सिर खुजाते हुए कह दिया, 'लगता है, अब डाक्टरी छोड़कर आप काव्य-रचना करने लगेंगे।'

डॉ० अखिल कुछ जवाब देने ही जा रहे थे कि सहसा पीछे से एक नारी-कंठ तथा एक पुरुष-कंठ की सम्मिलित हँसी ने दोनों का ध्यान भंग कर दिया।

'ओहो ! मेजर साहब !' अखिल ने मुस्कराकर स्वागत किया।

सचमुच बुर्ज पर आने की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए हँसनेवाले प्रेमी-युगल थे नवविवाहित मेजर श्यामसिंह और आभा।

नमस्कारों के आदान-प्रदान के बाद मेजर ने हँसकर बुर्ज से नीचे झाँकते हुए कहा, 'और सुनाइए डॉ० साहब, प्रकृति के किस मनोरम दृश्य ने आपको काव्य-रचना करने पर विवश कर दिया ?'

'इस समूचे प्राकृतिक सौन्दर्य ने ही।' डॉ० अखिल ने कुछ लज्जित होकर बात बदल दी, 'क्या वातावरण है ?'

'यह तो कुछ खास नहीं,' मेजर ने, जो गाँव के प्राकृतिक सौन्दर्य में ही पले थे, और फौज में रहने के कारण पर्वतराज हिमालय का सौन्दर्य भी देख चुके थे, कहा, 'सौन्दर्य देखना हो, तो, कभी हमारे गाँव में चलकर एकाध दिन गुजारिए। नदी के जल में हरे-भरे वृक्षों के प्रतिबिम्बों की ऐसी छटा रहती है कि क्या बतलाऊँ !'

'और आप तो पर्वत-शिरोमणि हिमालय का सौन्दर्य भी देख चुके होंगे !' अखिल ने उत्सुकता से पूछा।

'उसका तो कहना ही क्या !' मेजर ने कहा। सहसा हिमालय की याद आने पर वह कुछ गम्भीर हो गए, 'परन्तु संसार की छत कहलानेवाले उस पर्वतराज की सफेदी को हम लोगों ने खून से लाल होते हुए भी देखा है, डा० साहब। उफ ! क्या नजारा था....'

कहते-कहते मेजर रुक गए, मानो वह दिल हिला देनेवाला दृश्य आज भी उनके मानस-चक्षुओं में उतना ही स्पष्ट दिखाई दे रहा हो।

'कहिए न !' डा० अखिल की उत्सुकता मेजर की खामोशी से दुगनी हो उठी।

'क्या कहूँ ! सफेद बर्फ पर जवानों की लाशें बिछी पड़ी थीं। उनकी वर्दियों का गहरा हरा रंग, बर्फ की सफेदी और खून की सुर्ख लाली के साथ मिलकर अजीब-सी वहशत उत्पन्न कर रहा था। गोलियों के टकराने से बर्फ फूटकर हाथ-हाथ भर ऊपर उछल जाती थी। हमारे दिल और दिमाग जैसे उस समय नहीं थे, बस हाथ थे, राइफल थी और एक लगन थी, दुश्मन आगे न बढ़ने पावे।'

'ओफ !' डाक्टर अखिल और नीलिमा के मस्तक श्रद्धा से झुक गए। अखिल ने ही फिर कहा, 'धन्य हैं आप लोगों के बलिदान, जो घर के आराम छोड़कर रातों को बर्फ पर सिर्फ इसलिए जागते रहते हैं कि हम आराम से यहाँ सो सकें। हमारी माँओं, बच्चों और पत्नियों को कोई हाथ न लगा सके।'

'नहीं, डाक्टर साहब,' मेजर सहसा कुछ याद आते ही उदास हो गए, 'हम तनिक भी धन्यवाद के योग्य नहीं। हम निरे बेवकूफ हैं, जो उधर देश के लिए जान देने को तैयार रहा करते हैं और इधर हमारे देश में, बल्कि हमारे घरों में, ऐसे लोग मौजूद हैं, जो सोचते हैं कि चीन और पाकिस्तान के साथ झगड़े के लिए हमीं जिम्मेदार हैं।'

आभा अपने पति का इशारा समझ गई, लेकिन चुप रही। उसे पसन्द नहीं था कि घर के मतभेदों का रोना उसके पति पराए लोगों के सामने रोते फिरें।

'हर देश में कुछ ऐसे लोग होते हैं।' डा० अखिल ने मुस्कराकर कह दिया, 'लेकिन वे भी हमारे जैसे ही मनुष्य हैं, उनके बारे में निराश होना ठीक नहीं।'

'निराश मैं नहीं होता, डाक्टर!' मेजर के चेहरे पर भी एक क्षीण-सी मुस्कान उभरी, 'किन्तु परसों मेरी छुट्टी समाप्त हो रही है। अभी तक मैं अपने भाई को ही नहीं समझा सका।'

'आपके भाई वही न!' नीलिमा की आँखों में उस तेज,'किन्तु भोले युवक को तसवीर घूम गई, जो बहस के जोश में छोटे-बड़े का भेद भी नहीं मानना चाहता, और नीलिमा कहे बिना न रह सकी, 'उनमें एक आग है, जो समाज की बुराइयों को एकबारगी जला डालना चाहती है। यह आग कहीं बुराइयों के साथ अच्छाइयों को भी न जला डाले, इसके लिए उन्हें प्यार और ममता की जरूरत है।', फिर कुछ सोचते हुए जैसे

अनजाने ही उसके मुँह से निकल गया, 'किसी दिन मैं एक बार फिर उनसे मिलना चाहती हूँ, मेजर साहब !'

'सच !' मेजर की आँखों में भविष्य की एक सुखद कल्पना झिलमिला उठी : नीलिमा और रामू—रामू और नीलिमा—वह आगे कुछ न सोच सके और उनका हर्ष इन शब्दों में फूट पड़ा, 'आपकी बातों से मुझे एक सहारा, एक बल मिल गया है मिस नीलिमा !'

किन्तु जिस कल्पना से मेजर को बल मिला था, शायद उसी कल्पना से, डॉ० अखिल के चेहरे पर एक मौन उदासी छा गई, फिर भी उन्होंने मानो जबरदस्ती मुस्कराते हुए कहा, 'विचार अच्छा है ।'

कुछ देर इधर-उधर की बातों के बाद जब डॉ० नीलिमा और अखिल विदा लेकर चले गए और शाम का झुटपुटा फैलने लगा, तब मेजर ने किले से बाहर पहुँचानेवाली सीढ़ियाँ उतरते हुए सहसा आभा के कन्धे पर एक हाथ रखकर पूछा, 'सुनो, अगर कभी रामू और यह डाक्टरनी पति-पत्नी बन सकें तो कैसा रहे ?'

'बहुत बढ़िया !' आभा ने अपनी स्वाभाविक शर्मीली मुस्कान से उत्तर दिया, 'लेकिन बिना जात-पाँत जाने....?'

'आजकल इन बातों को कोई नहीं मानता पगली !' मेजर ने हँसकर कह दिया, 'और हमारे वेद, उपनिषद वगैरह पुराने ग्रन्थों में भी सब जातियों को एक ही भगवान् का रूप कहा गया है ।'

'लेकिन अपने गाँवों में तो अब तक यह सब चल रहा है ।' आभा ने मुस्कराते हुए कहा, 'औरों की बात जाने दीजिए, आपने खुद जात में ब्याह किया है ।'

'मेरी आभा रानी किसी भी जात में पैदा हुई होतीं,' मेजर ने एकान्त देख, सीढ़ियों पर ही शरारत से आभा को जरा-सा अपनी ओर खींचते हुए हँसकर कहा, 'कसम ले लो, मैं उन्हीं को दुल्हिन बनाकर लाता ।'

'हटो, लगे बनाने !' आभा ने मन ही मन मेजर की शरारत को पसन्द करते हुए भी मुस्कराहट के साथ अलग हटते हुए कहा।

'बनाता नहीं।' मेजर ने दृढ़ता से कहा, 'अपने देश में प्यार को जन्म-जन्मान्तर का बन्धन कहा गया है। वह किया नहीं जाता, अपने-आप हो जाता है ईश्वर के विधान से।'

'ठीक है, पर अगर माँजी न मानें,' आभा ने आखिरी शंका प्रकट की, 'तब ?'

'हम लोग उन्हें मना लेंगे।' मेजर ने कहा।

वे लोग बातों-बातों में किले से उतर आए थे और गाँव की बस पकड़ने के लिए एक बार फिर राजनगर की शोर भरी सड़क से बस-स्टैण्ड की ओर बढ़ रहे थे।

मेजर को इसी सड़क पर ताँगे द्वारा स्टेशन से बस-स्टैण्ड आते समय हुई अपनी और रामू की बातें याद आ गईं।

'रामू भी इस समय फैक्टरी से साइकिल पर लौट रहा होगा।' वह सोच रहे थे, 'आजकल हजरत फिर किसी नई स्ट्राइक की धुन में हैं। कल शाम एक काली दाढ़ीवाला नेता-टाइप कुर्त्ता-पाजामा-धारी युवक उसके साथ आया था। दोनों किसी वाद-विवाद में व्यस्त थे। जाते-जाते वह युवक बोल उठा था—इस बार हम अन्याय से समझौता न करेंगे; प्रदर्शन असफल नहीं हो सकेगा।' मेजर चार-पाँच दिन पूर्व रामू और अखिल का कटु विवाद सुन चुके थे, अतः कुछ नहीं पूछा उन्होंने रामू से।....

'शंका माँ की ओर से नहीं है आभा !' हठात् उन्होंने पिछली बात को याद कर कहा, 'शंका है तो स्वयं रामू की ओर से। कहीं राजनीतिक उन्माद में वह इस देवी के वरदान को ठुकरा न दे, या कहीं उसकी वर्तमान गतिविधियाँ उसे जेल में बन्द न करा बैठें और उस स्थिति में....'

'कहिए न ?' आभा उत्सुक हो उठी।

'उस स्थिति में यदि नीलिमा को लेकर रामू का प्रतिद्वन्द्वी कोई उच्च-

वर्गीय युवक हो, तो उसे अनुकूल अवसर मिल जाएगा।' मेजर की कल्पना आज मानो पंख लगाकर भविष्य की वीथियों में भ्रमण कर रही थी।

'पर छोड़ो!' उन्होंने ही कहा, 'अभी तो यह सब कल्पना है। लो, हम स्टैण्ड पर आ पहुँचे।'

गाँव की बस पकड़ने के लिए दोनों ही भीड़ तथा कोलाहल-भरे बस-स्टैण्ड में प्रविष्ट हो गए। संध्या और रात्रि का संगम हो रहा था। विद्युद्दीप जलने लगे थे और मेजर के मानस-लोक में भी न जाने कौन-कौन से दीप जल-बुझ रहे थे।

६

अखिल एक खामोश व्यक्ति था। शायद बचपन से ही उसकी परिस्थितियों ने उसे मौनी बना दिया था। बोलता वह तभी था, जब चुप रहना उसे असह्य हो उठता था।

नीलिमा पढ़ाई के समय से ही अखिल के साथ रही है। यद्यपि चुप रहनेवाले अखिल को उसके प्रति अपनी आन्तरिक भावनाएँ प्रकट करने में सदा संकोच होता था, फिर भी जैसे नीलिमा में उसके प्राण थे। किसी दिन जुकाम हो जाने से यदि वह कालेज न आ पाती, तो अखिल कालेज से सीधा उसके बँगले पर पहुँच जाता। वहाँ सदा उसे घर के बेटे जैसा ही स्नेह दिया जाता। और, धीरे-धीरे वह नीलिमा को 'अपनी' और नीलिमा के घर को 'अपना' समझने लगा था।

प्रायः अस्पताल की नर्सें तथा दूसरे लोग उनके पीठ-पीछे खुसफुस किया करते कि इन दोनों की शादी अवश्य हो जाएगी। किन्तु नीलिमा इन बातों से उदासीन ही दिखाई पड़ती। इतने पर भी अखिल के मन

के किसी कोने में यह विश्वास दृढ़ था कि नीलिमा कभी-न-कभी उसकी हो जाएगी।

लेकिन आज ?

आज शाम मेजर और नीलिमा की बातचीत के बाद अखिल को अपने विश्वास के पाँव डगमगाते-से मालूम पड़े। एक कुटिल राजनीतिज्ञ युवक का हाथ सहसा दोनों के बीच में आकर उसकी नीलिमा को उससे दूर ले जाता-सा प्रतीत हुआ !

अखिल को तभी कुछ सन्देह-सा हुआ था, जब उस दिन मेले में मेजर और रामू नीलिमा से अचानक मिलने आ पहुँचे थे और नीलिमा ने रहस्यभरी मुस्कान से अखिल से कहा था 'हैं दो सफर के साथी !' इसके पहले अपने किसी परिचित या सम्बन्धी का परिचय अखिल से छिपाया नहीं था नीलिमा ने।

उस दिन अखिल के मस्तिष्क में पैदा हुआ सन्देह-कीट आज 'पैरासाइट' बनकर जैसे उसका रक्त चूसे ले रहा था।

और, आज फिर चुप रहना असह्य हो उठा अखिल के लिए। टैक्सी की पिछली सीट पर नीलिमा की बगल में बैठे-बैठे वह बोल उठा, 'नीलिमा ! क्या तुम सचमुच इन मेजर महाशय के भाई को समझाने के लिए उससे मिलने का विचार कर रही हो ?'

'हाँ !' नीलिमा ने खिड़कियों के बाहर भागती हुई रोशनियों पर दृष्टि टिकाए हुए ही कह दिया, 'अभी-अभी आपने ही मेजर से कहा था कि ऐसे भटके हुए लोग भी हमारे जैसे मानव हैं और उनके विषय में निराश होना ठीक नहीं।'

'वह तो मैंने निराश मेजर को धीरज बँधाने के लिए कहा था। मेरा मतलब यह नहीं था कि दुनिया भर को सुधारने का ठेका हमीं अपने सिर पर ले लें।' अखिल ने अपनी बात का विश्लेषण करते हुए कहा, 'हम डॉक्टर हैं। रोगियों का इलाज करना हमारा धर्म है। हमें जो सुधार

करना है, इसी क्षेत्र में करें, जैसे गरीब रोगियों को मुफ्त देखना, आपरेशन के नवीन उपकरण इस्तेमाल करना आदि। लेकिन यदि हम दुनिया भर को सुधारने का ठेका ले बैठे, तो न इधर के रहेंगे, न उधर के। दुनिया तो क्या सुधरेगी, हम अपने 'डॉक्टर के धर्म' को भी छोड़ बैठेंगे।'

'माफ कीजिएगा', नीलिमा की स्पष्टवादिता जाग उठी, 'डॉक्टर के धर्म को आपने बहुत सीमित कर दिया। मैं इसे व्यापक दृष्टि से देखना चाहती हूँ। रोगी कई प्रकार के होते हैं। व्यक्ति भी रोगी होते हैं और राष्ट्र भी। व्यक्तियों में भी शारीरिक और मानसिक रोग होते हैं। शारीरिक रोग केवल व्यक्ति को खाता है और मानसिक रोग छूत की तरह फैलकर व्यक्ति के साथ राष्ट्रों को भी हजम कर जाता है। इसलिए किसी भी ऐसे डॉक्टर को, जो अपने पेशे और अपने राष्ट्र के प्रति वफादार हो, शारीरिक रोगों के साथ ही मानसिक रोगों का भी अध्ययन और उनका इलाज करने का प्रयत्न करना चाहिए।'

'ऐसे मानसिक रोगों का इलाज गवर्नमेंट के पास है।' अखिल ने हँसकर कहा, 'उसे ऐसे दलों पर कानूनी रोक लगा देनी चाहिए।'

'यह इलाज तो रोग को मिटाने के बजाय रोगी को ही मिटा देने जैसा है।' कहते हुए नीलिमा खिलखिलाकर हँस पड़ी, 'किन्तु जब तक वे कारण मौजूद रहेंगे, जिन्होंने ऐसे दलों को पैदा किया है, तब तक एक दल को खत्म करने पर दूसरा और दूसरे को खत्म करते ही तीसरा पैदा हो जाएगा और हर नया दल पुराने से ज्यादा ही उग्र होगा।'

'किन्तु वे कारण कौन-से हैं ?'

'गरीबी, बेकारी और मनुष्य-मनुष्य के बीच आकाश-पाताल जैसी असमानता।' नीलिमा ने दृढ़ स्वर में कहा।

'यहीं तो मेरा मतभेद है।' अखिल ने कहा, 'मैंने गरीबी देखी है और गरीबों की मदद करना आज भी मैं अपना फर्ज समझता हूँ; किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि गरीबों की मदद के लिए मैं खुद गरीब बनना

पसन्द करूँ। दया से प्रेरित होकर कोई थोड़ा-बहुत दान दे सकता है; किन्तु गरीब यदि अमीर बनना चाहते हैं, तो उन्हें अपने ही बल पर बनना होगा। यदि इसी देश में मेरे जैसा गरीब अनाथ बालक एक सम्पन्न डॉक्टर बन सकता है, तो दूसरे गरीब बालक क्यों नहीं बन सकते ?'

'यदि किसी में आपकी जैसी प्रखर बुद्धि न हो, तो ?' नीलिमा ने मुस्कराकर यथासम्भव व्यंग्य का पुट बात में न आने देने की चेष्टा करते हुए पूछा।

'तो उसे गरीब ही रहना चाहिए।' अखिल ने निर्विकार स्वर में कहा, 'यह कोई न्याय नहीं कि प्रतिभाहीन व्यक्तियों को भी उठाकर प्रतिभावानों के बराबर बैठा दिया जाए।'

'तो दूसरे शब्दों में, विषमता में ही सच्चा न्याय है, यह आप मानते हैं ?' नीलिमा ने कुछ आश्चर्य से पूछा।

वह अब तक डॉ० अखिल को गरीबों का सच्चा हमदर्द समझती थी और उस दिन मेले में उनकी ओर से रामू को फटकार भी चुकी थी; क्योंकि उसने प्रायः डॉ० अखिल को यह कहते सुना था कि उन्हें अपनी प्रतिभा पर तनिक भी अभिमान नहीं है। आज उसे उनके व्यक्तित्व में एक अन्तर्विरोध का बोध होने लगा।

'निश्चय ही।' डॉ० अखिल उत्तर दे रहे थे, 'इसमें आश्चर्य की क्या बात है। समता की विचारधारा भी तो कोई नई नहीं है। सदियों से बुद्ध, प्लेटो और ईसा जैसे समता के प्रचारक होते रहे हैं, किन्तु अप्राकृतिक होने से उनका सिद्धान्त व्यवहार में नहीं आ सका। संसार के कोई दो आदमी बल, बुद्धि और रूप में समान नहीं होते। उन्हें समाज से मिलनेवाला पैसा उनके इन्हीं गुणों की कीमत है। जब गुण समान मात्रा में नहीं हैं, तो कीमत भी सबको एक-सी नहीं मिल सकती। इसलिए आर्थिक विषमता में ही न्याय है, न कि समता में।'

'आपका मतलब है,' नीलिमा ने गम्भीरता के आवरण में कहा, 'कि आज पूंजीपति वही हैं, जो गुणवान हैं और गरीब वही, जो मूर्ख है! किन्तु मैं समझती हूँ, प्रेमचन्द और निराला जैसे गरीब साहित्यकार टाटा, बिड़ला और डालमियाँ से ज्यादा गुणवान हो चुके हैं। आपकी विचार-धारा के अनुसार तो उन्हें टाटा-बिड़ला से ज्यादा अमीर होना चाहिए था ?'

अखिल को उत्तर न सूझा। तर्क में पराजित होने पर कितना ही शान्त व्यक्ति हो, कुछ-न-कुछ खिन्न-सा हो जाता है। उस समय बुद्धि के सन्तुष्ट हो जाने पर भी विपक्ष के मत को स्वीकार कर लेने के बजाय, वह अपने मन की कमजोरी को छिपाने के लिए निजी आरोप, व्यंग्य आदि की शरण लेता है। अखिल भी इसका अपवाद न था।

'खैर!' उसने कहा, 'तुम मुझसे सहमत हो, न हो, तुम स्वतंत्र हो। किन्तु स्वयं ऐसे विचार लेकर तुम उन महाशय को भला क्या समझाओगी? अच्छा हो, तुम भी अपने पद से इस्तीफा देकर उन्हीं के दल में शामिल हो जाओ।'

अन्तिम वाक्य में रोकते-रोकते भी व्यंग्य की गन्ध आ गई, किन्तु स्वतंत्र और कुण्ठारहित वातावरण में पली-पनपी नीलिमा ऐसे व्यंग्यों से प्रभावित होनेवाली नहीं थी।

'कोई बात नहीं।' उसने कहा, 'विना किसी दल में शामिल हुए भी यदि मेरा पद मेरे विचार-स्वातंत्र्य में कभी बाधक बना, तो इसे छोड़ते मैं हिचकिचाऊँगी नहीं।'

फिर कुछ क्षण रुककर नीलिमा ने कहा, 'और समझाना तो मि० रामू को इतना ही चाहती हूँ कि उनका लक्ष्य गलत नहीं, सिर्फ उनके तरीके गलत हैं। आन्दोलनों और हिंसक प्रदर्शनों से गरीबों को लाभ के बजाय हानि ही होती है। इस समझाने का परिणाम क्या होगा, इसकी मुझे चिन्ता नहीं।'

नीलिमा के दृढ़ स्वभाव और उसकी इच्छाशक्ति को डॉ० अखिल अच्छी तरह जानते थे। वह जो सोच लेगी, उसे करके रहेगी, यह भी उनसे छिपा नहीं था। वह नीलिमा की ओर से एकदम निराश हो गए। उन्हें लगा कि वह अब उनसे दूर और दूर ही होती जाएगी।

टैक्सी कब नीलिमा के बँगले के सामने रुकी और कब वह अभिवादन करके अपने बँगले के लान में प्रविष्ट हो गई, इसका उन्हें पता ही नहीं चला।

'अब कहाँ चलूँ साहब ?' टैक्सी ड्राइवर के प्रश्न ने उनका ध्यान भंग किया।

उन्होंने अपने निवासस्थान का पता बतला दिया और टैक्सी की पिछली सीट पर अपने को निढाल छोड़कर आँखें मूँद लीं।

७

राजनगर पार्क में आज शाम से ही हलचल और भीड़भाड़ है। इसका कारण शायद यह है कि आज पार्क के पीछे के विस्तृत मैदान में बिस्कुट फैक्टरी के मजदूरों की आम सभा है।

शाम से ही माइक फिटिंग वगैरह चल रहा है। मजदूर कार्यकर्त्ता बिजली के तार, बाँस आदि लिये तेजी से इधर-उधर आ-जा रहे हैं। मंच के पीछे की ओर वक्ताओं को, जो आ चुके हैं या आते जा रहे हैं, यथा-स्थान बैठाया जा रहा है। सामने श्रोताओं के रूप में मजदूर तथा कुछ दूसरे वर्गों के लोग भी आ-आकर अपना स्थान ग्रहण करने लगे हैं। श्रोताओं में आपसी बातचीत, बहसबाजी, गुलगपाड़ा बढ़ चला है।

'कृपया शान्त रहिए!' माइक पर एक मजदूर-स्वयंसेवक कह रहा है, "अब सभा की कार्यवाही शुरू होने में देर नहीं है। जो लोग उधर खड़े

हुए हैं, कृपया बैठने का कष्ट करें, ताकि दूसरों को भी सुभीता हो देखने और सुनने में।'

स्वयंसेवक की अपील का असर हुआ और श्रोताओं में शान्ति छा गई।

वक्तागण पीछे की ओर से चढ़कर मंच पर आ बैठे।

इन वक्ताओं में रामू भी था, जो पिछले सप्ताह डा० अखिल के प्रतिक्रियावादी विचारों और डा० नीलिमा के मुँह से उनका परोक्ष समर्थन सुनकर एकदम चिड़चिड़ा हो गया था। 'नीलिमा भी दूसरी अमीरजादियों जैसी ही है'—उसे लगा था—'फैशनेबिल और निर्मम!' और वह अपने विचारों पर और भी मजबूती से चिपक गया था—'साम्य का सिद्धान्त वे लोग कभी नहीं मान सकते, जिनके पास औसत मनुष्यों से कुछ अधिक सम्पत्ति है; क्योंकि उन्हें तो साम्य की स्थिति में कुछ खोना ही पड़ेगा। साम्य उन्हीं लोगों का सिद्धान्त है, जिनके पास खोने के लिए कुछ है ही नहीं और पाने के लिए सारी दुनिया है।' और, आज वह सोचकर आया था कि वह अपने भाषण से मजदूरों में अन्याय के खिलाफ एक 'आग' पैदा कर देगा!

'दोस्तो!' एक कथित गान्धीवादी यूनियन के मजदूर नेता श्री चन्द्रप्रताप सेठी बोल रहे थे, 'आज हम यहाँ क्यों इकट्ठे हुए हैं, यह आप सबको मालूम है। दुर्भाग्य से हमारी फैक्टरी आज राजनीति का गढ़ कही जाने लगी है, और किसी हद तक बात ठीक भी है। लाल, पीली, नीली टोपियाँ यहाँ भी अपना रंग जमाने की कोशिश कर रही हैं। मगर क्यों? आखिर यह हालत क्यों हुई?'

नेताजी ने अपनी बात का प्रभाव जानने के लिए श्रोताओं के चेहरों की ओर देखा, फिर एक सेकण्ड रुककर कहा, 'मैं समझता हूँ, यह हालत पैदा करने की जिम्मेदारी फैक्टरी के प्रबन्धकों पर भी कम नहीं है। फैक्टरी के मालिक इस शहर में नहीं रहते। उनके उद्योग की शाखाएँ

अनेक प्रदेशों में हैं। इस कारण, हो सकता है कि वह पूरा ध्यान इस शाखा पर केन्द्रित न कर पाते हों। किन्तु प्रबन्धक-वर्ग अपनी जिम्मेदारी से कैसे भाग सकता है?'

नेताजी की स्पष्टवादिता पर तालियाँ बज उठीं।

'आप जानते हैं,' नेताजी ने अपना वक्तव्य जारी रक्खा, 'पहले ज्यादा की रसीद पर कम वेतन देने की शिकायत उठी थी, जिसे आप लोगों की माँग और शासन के भय से 'प्रवन्ध' ने तत्काल दूर कर दिया। किन्तु इसी उद्योग की अन्य प्रादेशिक शाखाओं के मुकाबिले वेतनमान यहाँ कम होने की शिकायत बनी रही।'

रामू मुस्कराया। अब लगे हाथ अपनी यूनियन की वीरता की डींग मारने का मौका सेठी साहब नहीं चूकेंगे। और वही हुआ।

'हमारी यूनियन ने किस तरह प्रबन्धकों के निवास-स्थान पर धरना दिया, सत्याग्रह किया, अनशन किया, वह सब आपसे छिपा नहीं है।' नेताजी ने सीना फुलाकर कहा, 'प्रबन्धकों ने अपनी कठिनाइयाँ तथा दूसरी शाखाओं की तुलना में इस शाखा को लाभ कम होने का रोना रोया, और वह कुछ झुकने को तैयार हुए, बशर्ते कि हम भी कुछ झुकें।'

'क्या सुन्दर कैफियत दी है,' रामू की मुस्कान गहरी हो चली।

'थोड़ी सफलता भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं होतीं, सोचकर हम कुछ झुके।' सेठी साहब ने रोना-सा मुँह बनाते हुए कहा, 'किन्तु फैक्टरी में घुसी हुई कुछ दूसरी राजनीतिक यूनियनों ने हमारी इस नेकनीयती को हमारी गद्दारी और मजदूरों के प्रति हमारा विश्वासघात बतलाते हुए 'पूर्ण समानता' और 'दीर्घ संघर्ष' के दुस्साहसपूर्ण नारे लगाए, जो बुरी तरह असफल रहे।'

जिस यूनियन का उल्लेख सेठी साहब कर रहे थे, मंच पर आसीन उसी यूनियन के नेताओं का धैर्य कम होता जा रहा था, किन्तु रामू की आँख के इशारे और मुस्कान ने उन्हें चुप रक्खा।

'यदि हमारे वे भाई सफल होते, तो हमें प्रसन्नता ही होती,' सेठी साहब ने विरोधियों की खुशामद-सी करते हुए कहा, 'किन्तु हम शुरू से देश को आर्थिक हानि करानेवाली लम्बी-लम्बी हड़तालों के पक्ष में नहीं थे, अब भी नहीं हैं। हम लोगों का एक सुझाव है। कल केन्द्रीय श्रम-मंत्रीजी नगर में पधार रहे हैं। हम लोग एक सर्वदलीय शिष्ट-मण्डल लेकर चलें, और उनसे यथोचित कार्यवाही करने का अनुरोध करें। इस सुझाव पर आप लोग विचार कीजिए।'

इसके बाद सेठीजी अपने स्थान पर जा बैठे। उनके साथियों ने उनकी पीठ ठोंकी। उधर जनता में भी तालियाँ बजीं। शोरगुल थमने पर लोगों ने देखा, मनीरामजी, जो एक अर्ध राजनीतिक धार्मिक संगठन से सम्बद्ध मजदूर-नेता हैं, माइक के सामने खड़े हैं।

'श्रमिक भाइयो, देश के निर्माताओ!' मनीरामजी ने अपनी विख्यात नत मुद्रा एवं श्रद्धा भरे स्वर में कहना आरम्भ किया, 'आप हमारे विकासशील राष्ट्र की आधारशिला हैं। आपको दुखी करके पूंजीपति, शासन या प्रबन्धक, कोई सुखी नहीं रह सकता।'

मजदूरों में तालियाँ गड़गड़ा उठीं।

'कितनी दो टूक बात कही है,' श्रोताओं में से कोई मजदूर अपने पड़ोसी से बोल उठा।

'श्रमिक भाइयो।' मनीरामजी आगे बढ़े, 'आप इस आर्यावर्त—भारतवर्ष के महान् नागरिक भी हैं। इस आर्यावर्त में दान की महान् परम्परा चली आई है। स्वयं भूखे मरते हुए व्यक्ति ने, याचक के माँगने पर अपनी रोटी का आखिरी टुकड़ा तक दे डाला है।'

मनीरामजी स्वयं कितने बड़े दानी हैं, यह रामू से छिपा नहीं था। हाँ, दान लेने के लिए अवश्य मनीरामजी सेठों और मिल-मालिकों के द्वार पर जाने में नहीं हिचकते। मूर्/ ने बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी रोकी।

उसके दूसरे साथी, यहाँ तक कि स्वयं श्री सेठी भी होंठ काटकर मुस्करा रहे थे।

'तो श्रमिक भाइयो!' मनीरामजी असल बात पर आ गए, 'आज जब फैक्टरी के प्रबन्धक-गण आपसे याचना कर रहे हैं, फैक्टरी को हुए घाटे का रोना रोकर आपसे भीख माँग रहे हैं—माँगें वापस लेने की भीख, आन्दोलन न करने और शान्ति बनाए रखने की भीख—तब क्या आर्यों की महान् सन्तान होकर आप इस याचना को ठुकरा देंगे या मंत्री महोदय से शिकायत न करते हुए शान्ति की भीख देकर अपने पूर्वजों की परम्परा की रक्षा करके स्वयं गौरवान्वित होंगे?'

'स्साला! प्रबन्धकों से दान पाकर आया लगता है।' सेठी होंठों ही होंठों में बुदबुदाए।

'दान की महिमा तो है,' एक भोला-भाला अशिक्षित मजदूर श्रोता अपने साथी से कह उठा।

'खाक! इन्हीं बातों से तो अमीरों के एजेण्ट हमें फुसलाते आए हैं।' साथी ने तपाक् से कह दिया।

'शर्म-शर्म!' श्रोताओं में से नारे बुलन्द हो उठे।

'हिज़ मास्टर्स वायस!' किसी ने फबती कसी।

और, मनीरामजी क्रोध से बड़बड़ाते, नास्तिकों को कोसते अपनी जगह पर जा बैठे।

'इस देश पर क्यों न चीन हमला करे? क्यों न यहाँ अकाल पड़े? यह सब शैतानों की बनाई 'साइंस' पढ़कर 'भगवान्' को भूल जाने का नतीजा है।' वह बड़बड़ा रहे थे। दूसरे नेतागण भी मन-ही-मन मजा लेते, मुस्कराते, उनसे ऊपरी हमदर्दी प्रकट करने लगे।

जब जनता में हँसी-मजाक, तालियाँ और गुलगपाड़ा कम हुआ, तो किसी श्रोता ने कहा, 'श्-श्, लो, कामरेड रामू मंच पर बोलने को उठ खड़े हुए।'

'साथियो !' रामू ने अपनी स्वाभाविक लापरवाही की मुस्कान के साथ कहा, 'मैं आपको देश के निर्माताओ, राष्ट्र के कर्णधारो वगैरह कहकर मजदूर-वर्ग की कोई स्तुति नहीं करने जा रहा हूँ, न ऐसी शाब्दिक स्तुतियों से आज के मजदूर-वर्ग का कोई लाभ ही मैं समझता हूँ। मैं स्वयं एक मजदूर हूँ और कुछ खरी-खरी कहने जा रहा हूँ।'

मंच पर कई लोगों के चेहरे सफेद पड़ गए। सेठी के माथे पर भी हलका-सा पसीना झलक आया। मनीरामजी ने नफरत से मुँह फेर लिया। उन्हें इस रामू और इसकी 'देशद्रोही' पार्टी से सख्त नफरत थी।

'अभी-अभी आपने दान-महिमा सुनी', रामू ने हँसी रोककर कहा, 'वह जिस युग का आदर्श था, उसी युग में मोक्ष का आदर्श भी तो था हमारे देश में ! अच्छा हो, प्राचीनता के नाम पर आप इसी मोक्ष के आदर्श को अपना लें। मोक्ष यानी छुट्टी। दुनिया और दुनिया की झंझटों —परिवार, बच्चे, तनख्वाह में वृद्धि का आन्दोलन—सबसे एक साथ हमेशा-हमेशा के लिए छुट्टी !'

श्रोताओं में हँसी की ऐसी लहर फैली कि लोग एक-दूसरे पर लोट-पोट होने लगे। कुछ मनचले छात्रों ने तालियाँ और सीटियाँ भी बजा दीं।

'किन्तु साथियो !' शोरगुल थमने पर रामू ने मुस्कराते हुए आगे कहा, 'मैं जानता हूँ, आप ऐसा नहीं कर सकते, न दान का उपदेश देने-वाले हमारे मनीरामजी ने ही कोई संन्यास ले रक्खा है। मनीरामजी शायद कहें कि आज का सांसारिक आदमी सभी पुराने आदर्श स्वीकार नहीं कर सकता। तब यही जवाब उनकी दानवाली अपील का दिया जा सकता है।'

इस बार जनता में उल्लासपूर्वक जोरों की तालियाँ बज उठीं। मंच पर सेठी मुस्कराने लगे। मनीरामजी का मुँह देखने लायक हो गया !

'हाँ, श्री सेठी और उनके साथियों के अनशन से मिली आंशिक

सफलता पर मैं उनका अभिनन्दन करता हूँ।' रामू ने कहा और कनखियों से देखा, मंच पर श्री सेठी और कथित गान्धीवादी यूनियन के सदस्यों के चेहरे खुशी के मारे खिल उठे हैं।

'किन्तु आप लोगों ने या स्वयं श्री सेठी ने कभी सोचा कि उनका अनशन क्यों सफल रहा ?' रामू ने कहा, 'किसी गुमनाम मजदूर या साधारण-से भिखारी का अनशन कभी सफल न होता ! श्री सेठी के अनशन का जो आंशिक प्रभाव पड़ा, उसका कारण उनके पीछे निहित जनशक्ति—आप सारे भाइयों—की ताकत थी।'

'निस्सन्देह !' पीछे बैंठे सेठी साहब गद्‌गद कंठ से कह उठे। उन्हें लगा कि उनके अनशन ने पूँजीपतियों का ही नहीं, इन उग्र वामपंथियों का भी हृदय-परिवर्तन कर दिया।

'जब-जब श्री सेठी, उनकी यूनियन या हमारी यूनियन ने कोई बड़ा करिश्मा किया है,' रामू ने कहा, 'वह हमारा करिश्मा नहीं, आप सबका करिश्मा है, जनशक्ति का करिश्मा है। और, इसीलिए श्री सेठी को, हम लोगों को या किसी भी नेता को पूँजीपति से या प्रबन्धकों से, जनशक्ति की इच्छा के खिलाफ कोई समझौता करने का अधिकार भी नहीं है। यह आप सभी के अधिकारों की लड़ाई है। इसे जारी रखना चाहेंगे, तो आप जारी रखेंगे। अगर समझौता करना चाहेंगे, तो आप ही करेंगे। हम केवल आपके प्रतिनिधि हैं, आपके अधिनायक या सेनापति नहीं कि इच्छानुसार युद्ध या सन्धि कर सकते हों।'

तालियों की गड़गड़ाहट से मैदान हिल उठा।

सेठी सन्न रह गए। इस लड़के ने तो मिश्री में लपेटकर कड़वी दवा उनके गले उतार दी ! फूलों की खुशबू सुँघाकर काँटों की चुभन का भी अनुभव करा दिया। जवाब देने की उनको इच्छा हुई, किन्तु एक के वक्तव्य के बाद ही दूसरा नेता बोल सकता था, इसी लिए विष भरा घूंट पीकर वह चुप रह गए।

'किन्तु दुख है, पिछली वार सेठी साहब और उनकी गान्धीवादी

यूनियन ने हमें आन्दोलन के मार्ग पर घसीटकर स्वयं किनाराकशी कर ली,' रामू ने इस तरह कहा, जैसे उसे हार्दिक अफसोस हो रहा हो।

'समझौतावादी मुर्दाबाद !' श्रोताओं में से एक-दो नारे लगे, 'शर्म ! शर्म !'

'शान्त रहिए।' रामू ने जनता को अपने पक्ष में आते देख मुस्कराकर कहा, 'सेठी साहब कोई मिल-मालिक या मैनेजर नहीं हैं। इसलिए हमारी लड़ाई इनसे नहीं है।'

लोग शान्त हो गए, किन्तु मंच पर सेठी साहब के दल के लोग दाँत पीसते देखे गए।

'जहाँ तक श्रम-मंत्री महोदय के पास शिष्टमण्डल ले जाने का सवाल है,' रामू ने एक-एक शब्द पर जोर देते हुए कहा, 'उसे मैं आप लोगों पर ही छोड़ता हूँ, किन्तु कुछ बातें जानना चाहता हूँ। पिछली बार सिंचाई-मंत्री से आपके किसान भाइयों ने इस क्षेत्र में अधिक नलकूप लगवाने की माँग की थी। उन्होंने शीघ्र कार्यवाही का आश्वासन भी दिया था। किन्तु आज तक कोई कार्यवाही हुई ? कुछ महीने पहले हम लोगों ने पुलिस-मंत्री का ध्यान डकैती की बढ़ती हुई वारदातों की ओर खींचा था। कोई कार्यवाही हुई अब तक ?'

'नहीं, बिलकुल नहीं,' श्रोता मजदूरों की आवाजें सुनाई पड़ीं।

'क्यों ?' रामू ने जोर से पूछा।

मंच पर, और श्रोताओं में भी अटूट मौन रहा।

'इसलिए कि शिष्टमण्डलों के पीछे जनशक्ति नहीं थी, या कहिए कि जनशक्ति का प्रदर्शन नहीं था !' रामू ने कहा, 'इस बार भी यदि कोरा शिष्टमण्डल गया, तो कोई सुफल सामने न आएगा।'

'फिर ?'

'हम क्या करें ?' आदि प्रश्न श्रोताओं में से उछाले जाने लगे।

'माओवादी मुर्दाबाद !' रामू के कोई उत्तर देने के पहले ही सेठी ने उठकर नारा बुलन्द किया।

'लोगों को तुम इस प्रकार भड़का नहीं सकते। बैठ जाओ।' मनीराम क्रोध से चीखकर बोले, 'हम दुबारा बोलना चाहते हैं।'

'शान्त महोदयो !' रामू ने माइक हाथ में लिये हुए ही मुस्कान के साथ इन लोगों को उत्तर दिया, जिससे उसकी आवाज माइक पर गूँज उठी, 'जनता किसे सुनना चाहती है, इसका फैसला वही करेगी।'

'कामरेड रामू को हम सुनना चाहते हैं।'

'रामू-रामू !' आदि स्वर श्रोताओं ने बुलन्द किया, तो सेठी, मनीराम वगैरह नेता लाल-पीले होते हुए मंच से उतरकर चले गए।

'तो साथियो, कोरे शिष्टमण्डलों से कुछ नहीं होगा, यह मैं कह रहा था।' रामू ने अपनी बात का सिलसिला जोड़ना चाहा।

'फिर क्या करने से काम बनेगा ?' एक जोशीले मजदूर ने श्रोताओं की भीड़ में से उठते हुए जोर से पूछा।

'ताकत के प्रदर्शन से', रामू ने कहा, 'किन्तु ईट-पत्थर या छुरे चला कर नहीं, शान्तिपूर्ण जुलूस द्वारा, काले झण्डे लिये हुए। मंत्री महोदय इस नगर में जहाँ भी जाएँ, उन्हें बाजार और दूकानें बन्द मिलनी चाहिए। उसके बाद उन्हें जो माँगपत्र दिया जाएगा, उस पर कार्यवाही करने के लिए वह मजबूर हो जाएँगे। यदि आप लोग मुझसे सहमत हों, तो मेरे साथ एक बार जोर से बोलिए—इन्कलाब....'

'जिन्दाबाद !' मैदान से लगा हुआ पार्क भी जैसे इस नारे से हिल उठा।

'आपका फैसला मुझे मान्य है !' रामू ने नतमस्तक होकर कहा, फिर सहसा कुछ याद करते हुए तनकर बोला, 'लेकिन दोस्तो, एक बात याद रहे। यदि आज रात ही इस साफगोई के कारण मैं सींखचों के पीछे या सीधे परलोक पहुँचा दिया जाऊँ, तो भी हमारे निश्चय में फर्क न आने पाए। न एक पत्थर बरसाया जाए, न एक भी बस जलाई जाए। केवल जनमत का शान्तिपूर्ण प्रदर्शन किया जाए। आप भूलेंगे तो नहीं ?'

'नहीं, कभी नहीं !' की गगनभेदी ध्वनियों के बीच रामू मंच से उतर गया।

८

'नीलिमा बेटी सुनो', शर्माजी ने रात्रि-भोजन से निपटकर अपनी पुत्री से कहा, 'जरा मुझे एक विषय में तुमसे विचार-विमर्श करना है।'

'आती हूँ, पिताजी !' कहकर नीलिमा हमेशा की तरह स्वयं माता-पिता के शयनकक्ष में उनका बिस्तर बिछाने लगी।

उसके पिता सदा अपने कार्यों में, अपने से छोटों की, विशेषकर नीलिमा की राय लेते आए हैं। उन्हें अपनी विदुषी पुत्री पर गर्व है। जब-जब उन्हें किसी विषय पर उसकी सलाह की जरूरत होती है, वह इसी प्रकार उसे बैठक में पहुँचने का संकेत देकर स्वयं वहाँ जा बैठते हैं। फिर रात गए तक दोनों में दो सहयोगी मित्रों की तरह सलाह-मशविरा होता है।

नीलिमा की सीधी-सादी माँ हमेशा इन झंझटों से दूर रहती हैं, और पति-पुत्री का जो निश्चय होता है, उसे ही ठीक मानने में सुविधा का अनुभव करती हैं। अतः आज भी शर्माजी की बात से न तो नीलिमा को कोई आश्चर्य हुआ, न उसकी माँ को।

'कहिए पिताजी ?' कुछ देर बाद बैठक में पहुँचकर नीलिमा ने पूछा।

'बैठो !' पिताजी मुस्कराते हुए बोले, फिर उसके बैठ जाने पर कुछ सोचकर बोले, 'बुरा न मानना बेटी, आज का विषय सीधा तुमसे सम्बन्ध रखता है।'

'कहिए न पिताजी, क्या बात है ?' नीलिमा अपने पिता की गम्भीरता को न समझते हुए भोले बच्चों की तरह बोली।

'कोई खास बात नहीं !' शर्माजी उसकी उत्सुकता को बढ़ाते हुए बोले, 'और न मैं उसे कोई महत्त्व ही देता हूँ, फिर भी सहज भाव से पूछ रहा हूँ।'

'ओफ्फोह !' नीलिमा तुनुक उठी। उसे पिताजी कुछ वैसा ही खिलवाड़ करते लगे, जैसे बचपन में उसकी मनपसन्द कोई चीज लाकर 'बतलाओ

क्या है ?'—कहते हुए अपने दोनों हाथ पीछे करके उसकी उत्सुकता का मजा वह लिया करते थे।

'बात यह है,' शर्माजी ने कहा, 'कि अखिल ने आज मुझसे कहा, तुम कुछ-कुछ राजनीति के चक्कर में पड़ती जा रही हो। एक राजनीतिक नेता की ओर तुम आकर्षित होती जा रही हो और उससे शादी....'

'उफ ! इतना झूठ !' नीलिमा को अखिल से ऐसी आशा नहीं थी।

'डॉ० अखिल ने ईर्ष्यावश झूठ-सच मिलाकर कहा है पिताजी !' नीलिमा नें तेज होकर कहा, 'राजनीति से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। और शादी-ब्याह के प्रति आज भी मैं उतनी ही उदासीन हूँ, जितनी पहले कभी थी। एक राजनीतिज्ञ युवक मेरा मित्र अवश्य है; किन्तु वैसा और उतना ही, जितने कि स्वयं डाक्टर अखिल !'

'तुम बेकार गरम हो रही हो बेटी !' शर्माजी मुस्कराने लगे, 'मैं यह थोड़े ही चाहता हूँ कि तुम शादी-विवाह को ओर से उदासीन रहो। वह तो सबको करना ही पड़ता है एक-न-एक दिन। किन्तु तुम अपने जीवन-साथी का चुनाव करना चाहती हो, तो एक अनुभवी व्यक्ति के नाते मैं तुम्हें कुछ सलाह देना चाहता हूँ।'

नीलिमा उन लड़कियों में से न थी, जो भावी जीवन से सम्बन्धित बुजुर्गों की सलाह पर ध्यान देने के बजाय शर्म से जमीन में गड़ जाती हैं। वह कुर्सी पर हत्था बदलकर बैठ गई और धैर्य से बोली, 'जरूर दीजिए पिताजी !'

'जीवन-साथी के चुनाव में कभी जल्दबाजी या भावुकता से काम नहीं लेना चाहिए बेटी, अन्यथा कई बार जीवन भर पछताना पड़ता है।' शर्मा जी ने कहा, 'मैंने स्वयं ऐसी ही गलती की थी, यह तुम्हारे सामने स्वीकार करने में मुझे संकोच नहीं। फलतः अपनी पत्नी के बौद्धिक स्तर की ओर से मैं सदा असन्तुष्ट रहा। मेरी बेटी, जिसकी पत्नी बने, उसे ऐसा असंतोष न हो, इसी से मैंने तुम्हें इतनी उच्च शिक्षा दिलाई है।'

नीलिमा मुस्करा उठी। माँ और पिताजी के विचारों का अन्तर उससे छिपा नहीं है। यद्यपि उसकी माँ ने स्वयं को बहुत कुछ बदल लिया था,

फिर भी दबी हुई पुरानी प्रवृत्तियाँ कभी-न-कभी उभर पड़तीं और हलके-से विवाद का रूप धारण कर लेती थीं।

'किन्तु यह तुम्हारी जिम्मेदारी है,' शर्माजी ने कहा, 'कि तुम्हारा पति बौद्धिक स्तर या शिक्षा में तुमसे कम न हो। जरूरी नहीं कि तुम्हारी तरह वह भी डाक्टर या विज्ञान का छात्र हो, परन्तु विचारों और संस्कारों में तुमसे पिछड़ा हुआ भी उसे न होना चाहिए।'

'विश्वास कीजिए, आपका दामाद ऐसा नहीं होगा,' नीलिमा ने निःसंकोच मुस्कान के साथ उत्तर दिया।

बेटी के रूप में आधुनिक नारी का अपना आदर्श साकार होते देख, शर्माजी का सीना गर्व से फूल उठा। वह बोले, 'तीसरी और अन्तिम बात यह कि उसका आर्थिक स्तर भी तुमसे कम न होना चाहिए।'

'यह आप क्या कह रहे हैं पिताजी!' नीलिमा ने साश्चर्य कहा, 'आप तो पोंगापन्थी लोगों की तरह धन और धर्म की दीवारें नहीं मानते थे?'

'धर्म की दीवार नहीं मानता,' शर्माजी धैर्य के साथ बोले, 'लेकिन 'धन की दीवार मानता हूँ। यह ठीक है कि धर्म की दीवार की तरह यह दीवार भी किसी भगवान् ने नहीं, स्वयं मनुष्य ने उठाई है और वही इसे गिरा भी सकता है; किन्तु वह दिन अभी दूर है। अभी तो हमें वर्तमान व्यवस्था के अनुसार चलना ही श्रेयस्कर है।'

'किन्तु आप तो आधुनिकतावादी थे न, पिताजी?' नीलिमा का समाधान अब भी न हो सका, 'और आधुनिक व्यक्ति, व्यवस्थाओं का बन्धन स्वीकार नहीं करता।'

'यह तुमसे किसने कहा? शर्माजी मानो अपनी उसी बचपनवाली नन्हीं नीलिमा को समझाते हुए बोले, 'आधुनिकतावादी व्यक्ति भूतकाल की व्यवस्था के अवशेषों को तो अस्वीकार कर सकता है; किन्तु वर्तमान से आँखें नहीं मूँद सकता! मैं भी जात-पाँत नहीं मानता, क्योंकि वह बीते युग की चीज है। आज पुरानी जातियाँ टूट रही हैं, नई पैदा हो रही हैं। सारा समाज सीधे-सीधे दो जातियों में बँटता जा रहा है: सम्पत्तिधारी

और सम्पत्तिहीन। सम्पत्तिहीन व्यक्तियों का काम है सम्पत्तिधारियों की गुलामी। जिन देशों में सम्पत्तिधारियों की सम्पत्ति छीन ली गई है, वहाँ का शासन ही 'सम्पत्तिधारी' की भूमिका अदा कर रहा है। सम्पत्तिहीनों के भाग्य में वहाँ भी गुलामी ही लिखी है। इस स्थिति में शादी-विवाह के द्वारा सम्पत्तिहीनों से सम्बन्ध जोड़ना हमारे वर्ग—सम्पत्तिधारी वर्ग—के लिए आत्महत्या के समान है।'

'सारांश यह कि मुझे किसी गरीब या किसान-श्रेणी के पढ़े-लिखे और योग्य युवक से भी सिर्फ इसी आधार पर विवाह न करना चाहिए कि वह हमारी श्रेणी का नहीं है?' नीलिमा ने सीधा प्रश्न किया।

'अवश्य, यदि तुममें विवेक और तर्क के प्रति तनिक भी आग्रह हो।'

'किन्तु अभी-अभी आपने स्वीकार किया है कि पिछले युग की जातियाँ इस युग में टूट रही हैं,' नीलिमा ने मुस्कराते हुए कहा, 'फिर इस युग की नई जातियाँ—अमीर और गरीब—भी अगले युग में कैसे टिकेंगी? आधुनिक व्यक्ति को वर्तमान के साथ ही भविष्य पर भी तो निगाह रखनी होगी न?'

'मेरी दृष्टि में यह जरूरी नहीं।' शर्माजी अडिग रहे।

'ठीक है, परन्तु आप ही तो कहते हैं,' नीलिमा की मुस्कान गहरी हो चली, 'कि हर सन्तान अपने माता-पिता से ज्यादा ही 'आधुनिक' होती है। आपने वर्तमान के लिए भूतकाल को छोड़ा, और मैं भविष्य को देखते हुए वर्तमान से विद्रोह करूँगी।'

'तो ठीक है,' शर्माजी ने कहा, 'मैंने सदा तुम्हें स्वतंत्र बुद्धि से कार्य करने की प्रेरणा दी है। आज भी मैं वही करूँगा। किन्तु तुम्हारे विचार सुनकर मुझे अखिल की बात में कुछ सचाई नजर आने लगी है।'

'डॉ० अखिल ने यद्यपि केवल ईर्ष्यावश काल्पनिक बात की है,' नीलिमा ने कहा, फिर लजीली मुस्कान से बोली, 'किन्तु कभी ऐसा सच

भी हो जाए, तो मुझे विश्वास है, आप अपनी आधुनिक बेटी को आशीर्वाद ही देंगे, पिताजी !'

'आधुनिक पुत्रियाँ आशीर्वाद नहीं माँगतीं,' शर्माजी सहज स्नेह भरी हँसी के साथ कह उठे, 'वे तो कोर्ट-मैरिज का सर्टीफिकेट लाकर दिखला देती हैं !'

दोनों हँस पड़े और विवाद तथा मतभेद का हलका-सा तनाव इस हँसी और मजाक के वातावरण में विलीन हो गया।

नीलिमा अपने शयनकक्ष में चली गई और शर्माजी अपने बिस्तर पर करवटें बदलते रहे। तो क्या उन्होंने अपनी पुत्री को स्वतंत्र विवेक की अनुगामिनी और आधुनिका बनाकर कोई भूल की है ? क्या उनकी पुत्री भी दूसरी हमउम्र लड़कियों की तरह भावुकता में नहीं बह रही है ? क्या वह सम्पत्तिहीन घर में जाकर जीवन के कष्ट सहने के बाद भी उन आदर्शों पर दृढ़ रह सकेगी, जिनकी बात आज उसने की है ?

यही सब सोचते-विचारते वह निद्रा की गोद में खो गए।

६

मनीरामजी जब क्रुद्ध होकर मंच से उतरे, तो मन में जाने क्या सोचकर श्री सेठी को भी अपने साथ ले चले। श्री सेठी का जितना मतभेद रामू की उग्र वामपन्थी पार्टी से था, उतना ही मनीरामजी के कथित 'साम्प्रदायिक' दल से भी था, किन्तु इस समय रामू के वाग्बाणों ने मर्म-स्थल पर चोट कर उनकी सोचने-समझने की क्षमता ही मानो हर ली थी। वह चुपचाप मनीरामजी के साथ चलते रहे।

एक आघात-सा उन्हें तब लगा, जब देखा कि वह मनीरामजी के साथ चलकर उनके दल के कार्यालय की इमारत के सम्मुख आ पहुँचे हैं।

मनीरामजी के दल का कार्यालय सचमुच एक भव्य इमारत में था।

यह पूँजीपतियों और मिल-मालिकों से उन्हें मिलनेवाले उस गुप्तदान का ही प्रसाद था, जिसकी कटु आलोचना श्री सेठी किया करते थे।

'मनीरामजी तो 'मनी'-राम हैं ही,' श्री सेठी अक्सर मजाक में अपने सहयोगियों से कहा करते थे, 'बल्कि परसेण्टेज लगाइए, तो 'मनी' का अंश 'राम' के अंश से ज्यादा ही बैठेगा!'

आज रामू और उसकी यूनियन के व्यवहार की प्रतिक्रिया में बहकर वह उन्हीं मनीराम के साथ चले आए हैं और ठीक उनके दल के कार्यालय तक! इस विरोधाभास पर वह सहसा धीमे से मुस्करा उठे। जब चले ही आए, तो बाहर के बाहर कैसे लौट जाएँ?

थोड़ी ही देर बाद इस अर्ध-राजनीतिक धार्मिक दल के कार्यालय में एक दूसरी गुप्त बैठक हो रही थी, जिसमें भाग लेनेवाले थे श्री सेठी, मनीराम और मनीराम के दल के कुछ गिने-चुने सदस्य।

'आज उन्होंने दान और मोक्ष जैसे गम्भीर आदर्शों की हँसी उड़ाई है,' मनीराम यहाँ ऐसे बोल रहे थे, जैसे कोई असफल शिकारी घर लौट कर शेर-चीतों को गालियाँ देकर अपनी 'वीरता' पर सन्तोष करने की चेष्टा करे, 'उन्होंने हमारे धर्म की हँसी उड़ाई है। रूस और चीन के ये दलाल और क्या करेंगे? खैर, वे जो भी कहें या करें, हम अब उनका कल का प्रदर्शन सफल न होने देंगे।'

'मगर मनीरामजी,' सेठी ने आश्चर्य-भरे स्वर में टोका, 'प्रदर्शन की असफलता का अर्थ जानते हैं? उसका अर्थ होगा मजदूर-वर्ग की गहरी असफलता। और उस पार्टी-विशेष से मतभेद होने पर भी मजदूर वर्ग से हमारी कोई दुश्मनी नहीं है।'

'हें-हें-हें! बड़े भोले हैं आप सेठी साहब!' मनीरामजी ने अपनी लम्बी-सी चोटी में गाँठ लगाते हुए पान से रँगी बत्तीसी निपोरकर कहा, 'जरा सोचिए, यदि उन बदमाशों के बताए रास्ते पर चलकर मजदूर सफल हो गए, तो यह हमारी और आपकी भी पराजय होगी। मजदूरों

पर वही बदमाश छा जाएँगे और हमारे 'देश-धर्म' तथा आपके 'गान्धीवाद' का नाम तक सुनना मजदूर पसन्द नहीं करेंगे।'

मनीरामजी ने थोड़ा ठहरकर सेठी के चेहरे को गौर से देखा कि वह प्रभावित हो रहे हैं या नहीं। किन्तु सरलहृदय व्यक्तियों पर स्वार्थ का रंग जरा देर से ही चढ़ता है।

'इसका अर्थ यह हुआ,' सेठी ने ताज्जुब से कहा, 'कि आप दल के हित को मजदूरों के—जन समुदाय के—हित से ऊपर रखते हैं।'

'राम भजो, सेठी साहब ! हमारा दल चाहे नष्ट ही हो जाए, पर हम इन लाल झण्डेवालों का मजदूर वर्ग और देश पर हावी हो जाना बर्दाश्त नहीं कर सकते, क्योंकि रूस या चीन में जहाँ कहीं भी इनका राज हुआ है, वहीं इन्होंने लोगों का धर्म नष्ट कर दिया !'

'हाँ-हाँ, उग्र-पंथियों का देश पर हावी हो जाना भला, कौन पसन्द करेगा ?' सेठी साहब को अपने विचारों की मौलिकता दिखाने के लिए कहना पड़ा, यद्यपि धर्म की ओर भी उनका कोई विशेष झुकाव नहीं था।

'फिर क्या बात है !' मनीराम ने सफलता की मुस्कान को सयत्न छिपाकर रहस्यमय स्वर में कहा, 'आप अपने कुछ आदमियों को जुलूस में शामिल करा दीजिएगा, जो किसी बस या टैक्सी पर 'पहला पत्थर' भर चलाकर भाग खड़े हों, और बस ! आग में इतना ही घी काफी है। पुलिस तो चारों तरफ रहेगी ही। लाठी-चार्ज हुआ कि वे 'बदमाश' सींखचों के भीतर। आपके अहिंसावादी दल पर कोई भी शक न कर सकेगा और तोड़-फोड़ का आरोप उन्हीं लोगों के मत्थे मढ़ दिया जाएगा।'

'क्या ?' सेठी बुरी तरह काँप उठे। 'देश-धर्म' के इन तथाकथित संरक्षकों से उन्हें ऐसी आशा नहीं थी। मिल-मालिकों से 'दान' पाने के बावजूद ये लोग कम-से-कम चरित्र के गिरे हुए नहीं हैं, ऐसा उनका विश्वास था, जो आज भरभराकर मिट्टी में मिल गया।

'आप चौंक क्यों पड़े ?' मनीराम के प्रश्न ने उनका ध्यान भंग किया।

'आपका मतलब है,' सेठी ने भौंहें सिकोड़कर पूछा, 'कि उग्र-पन्थियों को नीचा दिखाने के लिए हम भी उन्हीं जैसे बन जाएँ?'

'क्या हानि है? शास्त्र कहता है, विषस्य विषमौषधम्।' मनीराम ने कहा।

'क्षमा कीजिएगा।' सेठी उठ खड़े हुए, 'आपका शास्त्र आपको मुबारक। मेरा तो गान्धीजी के इस कथन में विश्वास है कि बुरे साधनों से अच्छे साध्य की कभी प्राप्ति नहीं हो सकती। अच्छा, अब चलता हूँ, वन्दे।'

मनीरामजी क्षण भर को निःस्तब्ध रह गए। सेठी पिछली बार मजदूर-हितों के विरुद्ध प्रबन्धकों से समझौता करके भी अपने तथाकथित सिद्धान्तों से इस बुरी तरह चिपके होंगे, इसकी कल्पना भी मनीराम ने नहीं की थी।

जब सेठी सचमुच उठकर चल दिए, तब स्थिति की गम्भीरता मनीराम को दिखाई पड़ी—यदि श्री सेठी रामू की यूनियन को, या पुलिस को यहाँ हुए विचार-विमर्श का ब्योरा दे बैठे, तो समझो, मनीराम और उनके दल की लुटिया ही डूब गई!

'सुनिए तो सही! चले कहाँ गुरुदेव?' कहकर मनीरामजी मानो रिरियाते हुए लपककर श्री सेठी के सामने आ गए, फिर जाने क्या याद आ गया कि दौड़कर एक टेबिल के ड्रावर से सौ-सौ के कुछ नोट, जो दल को लुटिया डूबने से बचाने के लिए महँगे नहीं थे, निकाल लाए और श्री सेठी को चकित कर उनकी जेब में ठूँसते हुए बोले, 'कम-से-कम यहाँ हुई बातों को गुप्त रखने का आश्वासन तो देते जाइए।'

रिश्वत! सेठी एक क्षण के लिए क्रोध से आपादमस्तक जल उठे। फिर उन्हें याद आया, पाँच गरीब लड़कों की बी० ए० की फीस आजकल वह भर रहे हैं। एक निर्धन ब्राह्मण कन्या के दहेज का भार भी स्वेच्छा से अपने सिर ले बैठे हैं। फिर उनका अपना भी तो खर्च है। अपने खर्च के लायक रुपया तो वह अपनी राजनीतिक पुस्तकों की रायल्टी से ही कमा लेते हैं; किन्तु उनकी ओर आशा-भरे नेत्रों से देखनेवाले उन निरा-

श्रितों के लिए यदि वह मनीराम का दिया हुआ रुपया स्वीकार कर लें, तो क्या हर्ज है ? फिर वह रुपया मनीराम का भी तो नहीं है। वह तो उसे उन लोगों से 'दान' में मिला है, जो गरीबों को लूटते हैं ! सेठी तो केवल गरीबों के उस रुपए को गरीबों के ही पास पहुँचाने में सहायक बन रहे हैं।

'लुटेरों को लूटने में पाप नहीं,' उनके मन ने कहा, 'वह लूट भी जब अपने लिए न होकर दूसरों के लिए निष्काम भाव से की जाए।' और वह शायद भूल गए कि कुछ क्षण पहले ही वह स्वयं साध्य की पवित्रता के साथ, साधन की पवित्रता पर जोर दे रहे थे।

'ठीक है,' उन्होंने मुस्कराकर कहा, 'मैं और मेरा दल आपके इस षड्यंत्र में भागीदार नहीं बनेंगे, न हम गान्धीवाद का उल्लंघन कर हिंसा का सहारा ही लेंगे; किन्तु इतना ही काफी समझिए कि आपकी काली करतूतों की इस बार पोल नहीं खोलूंगा।'

मनीरामजी के लिए इस समय इतना ही काफी था। उन्होंने सिर झुका लिया। सेठी से नजरें मिलाने का भी साहस अब उनमें नहीं रह गया था। उन्हें लग रहा था कि धर्म और नैतिकता की उनकी नकाब खिसक गई है और सेठी के सामने वह नंगे हो गए हैं।

जब सेठी कार्यालय की सीढ़ियाँ उतरकर दूर चले गए, तब मनीराम एक तरह से अपने 'अनुयायियों' के सामने अपनी झेंप को छिपाने के लिए मरी-सी हँसी हँसकर बोले, 'इसकी ओर से तो निश्चिन्त हुए। विचित्र आदमी है ! अभी-अभी कैसा सिद्धान्त झाड़ रहा था और अब नोट दबाकर खिसक गया। आजकल सिद्धान्त कितने सस्ते हो गए हैं !'

१०

रामू जैसे एक अपरिचित पुरुष के लिए नीलिमा किस तरह अखिल और अपने पिताजी तक से बहस कर बैठी, यह सोचकर नीलिमा अस्पताल के अपने वार्ड की छोटी-सी टेबिल के सामने बैठी-बैठी हँस पडी।

'यस डाक्टर ?' कहती हुई एक नर्स अन्दर आ गई।

'नथिंग !' नीलिमा ने कुछ कड़े स्वर में कह दिया और नर्स फिर बाहर चली गई।

अपने स्वर की कड़ाई पर स्वयं नीलिमा को आश्चर्य हुआ और वह मुस्करा उठी। उसे लगा, यहाँ पुरुषों के बीच काम करते हुए वह स्वयं पुरुष बनी जा रही है। शायद इसके लिए यहाँ के पुरुष ही जिम्मेदार थे, जिनमें से किसी की दृष्टि में ऐसा कुछ न था, जो नीलिमा के नारीत्व को जगा सकता। इसलिए वह स्वयं ही 'पुरुष' बनकर रहने को बाध्य हो गई थी, और डॉ० अखिल जैसे पुरुष भी उसके सामने नारियों जैसा आचरण करने लगे थे। उन पर वह सहज भाव से शासन किया करती थी।

यह स्थिति आगे भी जारी रहती, यदि बीच में ही नीलिमा को रामू न मिल जाता।

रामू ! एक स्निग्ध मुस्कान नीलिमा के होंठों पर खिल उठी। वह पहले-पहल बस में उसे एक शैतान बच्चे-सा लगा था, जिसे देखकर नारी की ममता नीलिमा के हृदय में जाग उठी थी और उसके राजनीतिक विचार तो उसे सचमुच बचपना ही जान पड़े थे। किन्तु चलते समय उसने जिस भाव से उसका कुमारी या श्रीमती होना पूछा और स्वयं अपना 'अकेला' होना बतलाया, उस मुद्रा ने उसमें नारी-सुलभ लज्जा भी जगा दी थी। वह तो अच्छा हुआ, तभी मेला आ जाने से बस रुक गई और वह नमस्ते कर लज्जा का भाव छिपाए उतर गई, नहीं तो थोड़ी ही देर पहले कहे हुए उसके अपने ही शब्द झूठे हो जाते, 'डाक्टर के लिए झूठी लाज-शरम की मैं जरूरत नहीं समझती !'

और, निस्सन्देह उसने रामू के प्रति ही एक अनजाने आकर्षण में बँधकर मेजर से कहा था, 'मेले में आएँ तो परिवार-नियोजन-केन्द्र पर आना न भूलिएगा !'

'क्या इसके पीछे यह भाव न था,' नीलिमा ने शर्माकर अपनी आत्मा से पूछा, 'कि मेजर के साथ रामू को भी अवश्य आना पड़ेगा ?'

फिर जब डॉ० अखिल का पक्ष लेकर नीलिमा ने रामू को डाँट दिया था, तब क्या वह भी उलटकर उसे वैसा ही जवाब नहीं दे सकता था, जैसा उसने अखिल को दिया था ? 'अवश्य दे सकता था' नीलिमा के मन ने कहा, 'क्योंकि उसके चेहरे पर असन्तोष स्पष्ट था, लेकिन उसने तुम्हें लज्जित नहीं किया।' उसके मौन में भी मानो नीलिमा के प्रति एक अपनापन और अपनों की कड़वी बात भी सहन कर लेने की उदारता थी।

दूसरी ओर अखिल था नीलिमा के सामने, जो नीलिमा से अपना तनिक-सा मतभेद सहन न कर सका और सीधा शिकायत करने उसके पिताजी के पास जा पहुँचा। वह तो गनीमत है कि उसके पिताजी आधुनिक विचारों के हैं, वरना डाक्टर साहब ने तो उसे विचित्र ही स्थिति में फँसा दिया था।

अब नीलिमा को रामू और उसके अप्रकट आन्तरिक प्रेम की कीमत का पता चल सका, और वह प्रस्तुत थी कि यदि वह अभी कहीं से उसके सामने उपस्थित हो जाए तो वह कह देगी, 'तुम महान् हो। मैं तुम्हारे सभी विचारों का समर्थन करती हूँ। सिर्फ तुम यह दुस्साहस का मार्ग छोड़ दो। इसमें न तुम्हारा भला है, न तुम्हारे मजदूरों का और न देश का।'

'डाक्टर नीलिमा !' कहते कुछ उत्तेजित-से बड़े डाक्टर मेहता उसके कमरे में आ गए।

'कहिए !' नीलिमा हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई। कोई गम्भीर केस होना चाहिए—उसके मस्तिष्क ने उसे सचेत किया—अन्यथा बड़े डाक्टर स्वयं यहाँ आने के बजाय उसी को अपने कक्ष में बुलवा सकते थे।

'मजदूरों के एक जुलूस पर गोली चल गई है।' डाक्टर मेहता ने कहा, 'घायलों को लाया जा रहा है। दूसरे वार्ड भरे हुए हैं, इसलिए आपके ही वार्ड में....'

'अवश्य, अवश्य !' कहती नीलिमा डॉ० मेहता के साथ चलने को उद्यत हो गई, किन्तु वह यह पूछे बिना न रह सकी, 'कहाँ के मजदूर थे वे ? गोलीकाण्ड कैसे हुआ ?'

'मजदूर तो राजनगर विस्कुट-फैक्टरी के ही थे' डाक्टर मेहता ने बाहर कदम बढ़ाते हुए कहा, 'किन्तु लाठी चार्ज और गोलीकाण्ड कानून और व्यवस्था को बनाए रखने के लिए हुआ बताते हैं।'

'क्या मजदूर हिंसा आदि का सहारा ले रहे थे?' नीलिमा ने डॉ० मेहता के पीछे-पीछे चलते हुए पूछा।

'ले रहे होंगे!' मेहता ने नीलिमा की जिरह से मानो उकताकर कहा, 'मॉब-मैण्टेलिटी!'

किन्तु बाहर निकलकर नीलिमा ने जो दृश्य देखा, उसके प्रभाव से डाक्टर मेहता की बात को उसका मस्तिष्क ग्रहण ही न कर सका। अस्पताल के बाहरी बरामदे में स्ट्रेचर पर कुछ बेहोश, कुछ घायल, कुछ कराहते हुए मजदूर लाए जा रहे थे। एक मजदूर की आँख लाठी की चोट से सूज गई थी, दूसरे का सर फट गया था और खून से उसका चेहरा, दाढ़ी तथा कपड़े लाल हो रहे थे, तीसरे का मुंह टेढ़ा पड़ गया था, और चौथा....?

चौथे को देखते ही जैसे नीलिमा के मस्तिष्क में एक साथ सैकड़ों शीशे खनखनाकर टुकड़े-टुकड़े हो गए! डाक्टर हो जाने के बाद से किसी भी मरीज या घायल को देखकर नीलिमा के मन की यह हालत कभी न हुई थी, जो इस समय हो रही थी!

क्योंकि वह चौथा और कोई नहीं, वही रामू था, जिसका चेहरा कई दिन और कई रातों से क्षण भर को भी नीलिमा के नेत्रों से न हटता था।

रामू के दाहिने हाथ में गोली लगी थी। खून रिस-रिसकर उसकी देह और उसके कपड़ों को गीला कर रहा था और कपड़े बुरी तरह लाल-लाल हो रहे थे।

'यह क्या हुआ? कैसे हुआ?' आदि बहुत-से सवाल थे, जो नीलिमा एक साथ ही किसी से पूछना चाहती थी; परन्तु इस समय उसने अपने सिर को एक झटका देकर इन विचारों को विदा कर दिया, और उसके मस्तिष्क में एक ही बात रह गई—कर्तव्य, डाक्टर का कर्तव्य, एक ममतामयी नारी का कर्तव्य!

कुछ ही देर में स्थिति की गम्भीरता को देखकर दूसरे वार्डों से अन्य डाक्टर भी वहीं आ गए, और सबने मिलकर हालत को सँभाल लिया।

डॉक्टर नीलिमा ने स्वयं रामू के आपरेशन की तैयारी की। कुछ ही देर में उसके दाहिने हाथ में घुस चुकी गोली को निकालकर नीलिमा ने मन-ही-मन एक अव्यक्त सन्तोष की साँस ली, किन्तु सीसे के उस घातक बुलेट का जहर रामू के रक्त में मिल चुका था और भीतर ही भीतर फैलता जा रहा था।

'डॉक्टर साहब!' नीलिमा ने पास ही खड़े बड़े डॉक्टर से काँपते स्वर में कहा, 'स्थिति गम्भीर है! क्या करना होगा?'

'अब एक ही रास्ता है' डॉ० मेहता ने एक सेकण्ड कुछ सोचकर कहा, 'कि उसका वह हाथ काट दिया जाए!'

'हाथ काट दिया जाए?'

'हाँ! किन्तु आपका स्वर क्यों काँप रहा है डॉक्टर नीलिमा?'

'कुछ....कुछ नहीं! यों ही।' नीलिमा जवाब देने में गड़बड़ा गई, 'किन्तु बिना इनके परिवारवालों की इच्छा जाने....?'

'परिवारवाले लड़के की मौत उतनी पसन्द नहीं करेंगे,' बुजुर्ग डॉ० ने तीखी दृष्टि से नीलिमा के चेहरे की तरफ देखकर कहा, 'जितना उसका एक हाथ से सदा के लिए वंचित हो जाना। किन्तु आप स्वयं विचलित हो रही हों, तो कृपया यहाँ से हट जाइए, मुझे यह केस सौंप दीजिए। देर करके मरीज की मौत को नजदीक मत बुलाइए।'

'मरीज की मौत!' नहीं! नीलिमा मन ही मन काँप उठी। क्या उसके सपनों का महल बनते-ही-बनते भरभराकर गिर पड़ेगा?

'मिस्टर रामू कौन हैं? उनकी माँ और भाभी बाहर खड़ी हैं।' इसी बीच में एक नर्स ने आपरेशन-कक्ष के भीतर आते हुए कहा।

'इसी यंगमैन का नाम रामू है।' नीलिमा ने कहा, 'मैं इनकी भाभी से परिचित हूँ। चलो, मैं बाहर चलती हूँ।' फिर, 'एक मिनट डॉक्टर!' कहती वह नर्स के साथ बाहर चली गई।

बाहर बरामदे में खासी भीड़ थी। घायलों के रिश्तेदार तथा मित्र वहाँ आकर ठस गए थे। एक कोने में सिमटी-सिकुड़ी-सी खड़ी आभा को पहचानकर नीलिमा उस भीड़ को चीरती उसी ओर बढ़ गई।

आभा के पास खड़ी वृद्धा ही रामू की माँ हैं, यह अनुमान कर नीलिमा ने बिना किसी भूमिका के कहा, 'माँजी, आप ही मिस्टर रामू की माँ हैं ? आपसे जल्दी में कुछ पूछना है ?'

'पूछिए', माँ ने कहा।

'मि० रामू को गोली लगी है,' नीलिमा ने कहा, और बिना रामू की माँ तथा भाभी की प्रतिक्रिया पर ध्यान दिए जल्दी में बोली, 'बड़े डॉक्टर कहते हैं, उनकी जान बचाने के लिए उनका दाहिना हाथ काट देना होगा! आप क्या कहती हैं ?'

'हे भगवान् !' वृद्धा माँ चीत्कार कर उठी। इसीलिए उनका बड़ा बेटा, इस रामू को आर्टी-पार्टी से दूर रहने को कह गया था, किन्तु उसके मोर्चे पर जाते ही....और वह फफककर रो उठीं, 'रामू की जिन्दगी बर्बाद हो गई। अब कोई लड़की उससे विवाह तक न करेगी।'

'जो अपना जीवन सिर्फ दूसरों के लिए कुर्बान कर सकता है, उसके लिए कुर्बानी करनेवालों की भी कमी नहीं होती माँजी।' नीलिमा ने दिलासा देते हुए कहा, जिसमें स्वयं उसकी अन्तरात्मा बोल रही थी।

'यह सब मन समझाने की बातें हैं बेटी !' माँ इन शहरवालियों की कोरी भाषणबाजी से बहुत जली हुई थीं, 'औरों को जाने दो, बुरा न मानना, अगर तुम्हीं से मैं कहूँ कि तुम मेरे अपाहिज बेटे से विवाह कर लो, तो....?'

'तो इसे मैं अपना सौभाग्य समझूँगी।' न जाने किस धुन में नीलिमा के मुँह से निकल गया, और उसने अपना होंठ काट लिया।

'माँजी ! यह वही हैं,' आभा ने फुसफुसाकर कहा, 'जिनकी तारीफ आपके दोनों बेटों ने उस दिन की थी।'

माँ को वह तारीफ याद थी। रामू की बात को तो वह गम्भीरता से न लेती थीं, मगर फौज में काम करनेवाले उनके समझदार बड़े बेटे ने भी कहा था, 'गजब है माँ वह लड़की! जैसे सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा तीनों एक साथ उसमें वास करती हैं।'

और, आज नीलिमा की बात सुनकर, शहरवालियों के प्रति उनके मन में जमी सारी घृणा, सारी उपेक्षा जैसे सहसा धुलकर बह गई। 'जो एक अपाहिज युवक के पीछे अपनी अनमोल जिन्दगी निछावर कर सकती है, वह किसी धर्म की हो, किसी जाति की हो, मामूली लड़की नहीं, सच-मुच देवी है!'—उनके मन ने कहा।

'तब ठीक है बेटी!' उन्होंने शीतल स्वर में कहा, 'जो चाहो, करो। मेरा बेटा तुम्हारे हाथों में है।'

नीलिमा इस भयंकर स्थिति में भी कुछ लजा-सी गई, किन्तु अगले ही क्षण दृढ़ संकल्प के साथ जैसे रामू की मौत से लोहा लेने के लिए वह आपरेशन-कक्ष के भीतर लपकती हुई चली गई।

११

रामू स्वस्थ हो चला है—शरीर से, मन से नहीं। अब वह अस्पताल के पलंग पर खामोश पड़ा, अपने दाहिने कन्धे को एकटक देखा करता है। बिना हाथ का कन्धा! एक अपाहिज का कन्धा! अब वह इसे देखने का आदी होता जा रहा है।

इसी हाथ-रहित कन्धे को जब उसने बेहोशी टूटने के बाद सर्वप्रथम देखा, तो शारीरिक चोट के दर्द से उतना नहीं, जितना इस मानसिक चोट से वह फिर बेहोश हो गया था, चिल्लाते हुए—'नहीं....ईं....ईं।'

बेहोशी में उसे ऐसा लगता रहा था, जैसे उसके दोनों हाथ सलामत हैं, वह सपरिवार बैलगाड़ी हाँकता हुआ नवदुर्गा के मेले की ओर चला

जा रहा है, भाभी से हँसी-मजाक कर रहा है और उसके एक हाथ का कट जाना जैसे कोई दु:स्वप्न मात्र था। लेकिन नहीं, उसे जब फिर होश आया, बल्कि लाया गया, तो उसका दिल डूबने लगा यह देखकर कि दु:स्वप्न भंग नहीं हुआ है और न इस जीवन में अब वह कभी भंग हो सकता है।

'माँ !' कहकर वह बच्चों की तरह फूट-फूटकर रो पड़ा और सिरहाने खड़ी माँ से लिपट गया था।

'धीरज रख बेटा !' कहकर माँ धीरज बँधाने की कोशिश में स्वयं रो पड़ी थीं।

धीरे-धीरे रामू ने सबको पहचाना। माँ की बगल में थी भाभी, जिसकी आँखें डबडबाई हुई थीं। भाभी की बगल में थी कोई डाक्टर—लेडी डाक्टर। वह इसे पहचानने की कोशिश करने लगा, और धीरे-धीरे उस भयंकर स्थिति में भी उसके होंठों पर एक करुण मुस्कान आ गई थी—नीलिमा ? वही नीलिमा, जिसका चेहरा उसके प्रयास के बावजूद हफ्ते भर से उसकी आँखों से न हटता था।

'बहुत दु:ख है हमें रामूजी !' उसने नीलिमा के ये शब्द सुने, जो मानो किसी कब्र या गहरे कुएँ से निकल रहे थे, 'आपकी जान बचाने का कोई रास्ता ही नहीं था, सिवा इसके कि....'

और क्षण भर को रामू अपनी दयनीयता पर लज्जित हो उठा था।

'हाथ ही तो कटा है डाक्टर !' उसने लापरवाही दिखलाने की असफल चेष्टा करते हुए कहा था, 'सर तो सलामत है !'

नीलिमा शायद उसके इस बनावटी साहस को देखकर मन-ही-मन रो पड़ी होगी, तभी तो कोई बहाना करके उस कमरे से निकल गई थी। रामू को याद है, जब वह दुबारा कुछ देर बाद उसके पास आई, तो उसकी आँखें लाल थीं। इस समय तक माँ, भाभी और दूसरे लोग वहाँ से जा चुके थे।

'मिस्टर रामू !' नीलिमा ने उसके सिरहाने बैठ, अपनी कोमल अँगु-

लियाँ उसके बालों में फेरते हुए भारी कण्ठ से कहा था, 'दर्द बहुत है न ? जल्दी ही अच्छा हो जाएगा।'

रामू उस समय नीलिमा से कुछ न कह सका था।

तब से रोज नीलिमा आती है, उसके बालों में स्नेह से अँगुलियाँ फिराती है, न जाने क्या-क्या दुनिया भर की बातें पूछकर और सुनाकर चली जाती है। माँ और भाभी भी आती हैं अपने वक्त पर और चली जाती हैं। भैया को पत्र लिख दिया गया है, किन्तु शायद इतनी जल्दी छुट्टी न मिलने के कारण वह नहीं आ सके। या शायद सोचते होंगे, आकर ही अब क्या कर लेंगे ! फौज में उन्होंने कई के हाथ-पैर कटते देखे हैं। वह जानते हैं कि एक हाथ या पैर कट जाने से इंसान मर नहीं जाता।

मौत ! रामू को हँसी आती है। मौत का डर अब उसे नहीं रहा। उस जुलूसवाले दिन मौत उसके कितने नजदीक थी ?

उसने जुलूस को शान्ति बनाए रखने के कितने निर्देश दिए थे, लेकिन न जाने कौन-सा गद्दार था उनमें, जिसने मंत्री महोदय की कार पर पहला पत्थर चला दिया ! पुलिस को लाठीचार्ज का मौका मिल गया, जिससे वाकी मजदूर भी उग्र हो उठे। दोनों पक्षों से पत्थर और गोलियों की बौछारें होने लगीं। मजदूरों को शान्त करने के प्रयत्न में ज्यों ही रामू सामने आया कि पुलिस की किसी बन्दूक से एक दहकता अंगारा निकला और उसके दाहिने कन्धे में आ घुसा। रामू दर्द से चीखकर दुहरा हो गया, और फिर उसकी स्मृति ही लुप्त हो गई।

वह घटना पुलिस अफसरों, मंत्री महोदय और पहला पत्थर चलाने-वाले उस सिरफिरे मजदूर के जीवन में भले ही कोई महत्व न रखती हो, लेकिन रामू की तो जिन्दगी ही बर्बाद हो गई ! कौन था वह गद्दार मजदूर ? रामू दिमाग पर जोर देता है, लेकिन किसी का चेहरा याद नहीं आता। शायद कोई वाहर का आदमी रहा हो, पुलिस से मिला हो ! पुलिस खुद चाहती है कि प्रदर्शनकारियों की ओर से कुछ उत्तेजक कार्यवाही हो और प्रदर्शन असफल हो जाए।

लेकिन फिर इसका उपाय क्या है? रामू को अस्पताल में पड़े-पड़े खिड़की से बाहर देखते-देखते ही जैसे यह निश्चय होता जाता था, कि अहिंसा से मजदूर कुछ हासिल नहीं कर सकते। उसे लगता, हमारी पुलिस ब्रिटिश राज्य की पुलिस से भी ज्यादा गई-बीती है! और, वह मन-ही-मन बुदबुदाता, 'अहिंसा से कुछ नहीं होगा। पुलिस की गोलियों का जवाब गोलियाँ ही हो सकती हैं।'

लेकिन अपने इन विचारों को किसी पर व्यक्त करने का साहस अभी रामू को नहीं होता। नीलिमा से कह दे, तो शायद बात बाहर तक पहुँच जाए और वह कुछ करने के पहले ही सींखचों के पीछे दिखलाई पड़े। माँ कुछ समझेगी नहीं! भाभी डर जाएगी कि अभी हाथ कटा, अब सर कटवाने की तैयारी है!

रामू ने इन्हीं विचारों में खोए-खोए देखा, नीलिमा उसके कमरे में आई और उसका चार्ट, टैम्परेचर आदि देखकर स्नेह से उसके पास बैठकर बोली, 'मिस्टर रामू, अब दर्द कैसा है? बहुत जल्दी आपको डिस्चार्ज मिल जाएगा।'

'दर्द?' रामू ने फीकी मुस्कराहट के साथ कहा, 'शरीर का दर्द ठीक हो चुका है डाक्टर, लेकिन दिल का दर्द इतनी जल्दी नहीं मिटेगा!'

नीलिमा ने रामू की बात का न जाने क्या मतलब समझा। वह पहली बार रामू के सामने कुछ लजा-सी गई और बोली, 'वह भी अच्छा हो जाएगा। समय बड़े-बड़े घाव भर देता है।'

'भर देता होगा।' नीलिमा के हाव-भाव पर ध्यान दिए बिना ही रामू कह बैठा, 'किन्तु मुझे अब चैन नहीं। जब अहिंसा के रास्ते पर चलकर मुझे यह सब भुगतना पड़ा, तो अब मैं भी दूसरा ही रास्ता पकड़ूंगा।'

'नहीं-नहीं!' नीलिमा ने कहा। उसका स्वर कुछ कम्पित-सा था, जैसे अभी कुछ और अनिष्ट होना बाकी है।

'मैं विप्लव मचा दूँगा।' रामू अपनी ही धुन में कहे जा रहा था, और थोड़ी देर पहले के, अपने विचार किसी पर व्यक्त न करने के निश्चय

को भी भूल-सा गया था, 'मैं आग लगा दूँगा, मजदूरों को खुलेआम हिंसा के लिए भड़काऊँगा और....'

'और हजारों गरीबों को अपनी ही तरह अपाहिज बना दूँगा, यही न ?' एक सूट-बूटधारी क्लीनशेव्ड तगड़े-से व्यक्ति ने कमरे में प्रवेश करते हुए व्यंग्य से कहा, 'शाबास बरखुरदार ! गरीब जनता तुमसे ऐसी ही आशा रखती है !'

रामू को लगा, जैसे उसके मुंह पर एक जोरदार तमाचा पड़ा हो ! सचमुच हिंसा की प्रतिक्रिया में वह अपने ऊपर बीत रहे परिणाम को भूल गया था और दूसरों को भी इसी आग में झोंकने की योजनाएँ बना रहा था। अपनी आत्मकेन्द्रित बुद्धि पर उसे ग्लानि हो आई ।

यह जानने पर कि वह सज्जन नीलिमा के पिताजी हैं, रामू ने 'नमस्ते, चाचाजी' कहते हुए जैसे ही हाथ जोड़ने की कोशिश करनी चाही कि उसे महसूस हुआ, अब उसके एक ही हाथ है, और वह चला है किसी भले आदमी को नमस्ते करने ! वह हँस पड़ा, हँसता गया, हँसता गया, यहाँ तक कि रो पड़ा ।

उसकी इस दशा पर, शर्माजी कठिनाई से ही अपनी आँखों को बरसने से रोक सके, यह उनके चेहरे से स्पष्ट था। यही नहीं, वह कुछ शर्मिन्दा-से भी दिखे, शायद रामू की इस दशा को अपने व्यंग्य का ही नतीजा समझकर ।

'माफ करना यंगमैन,' उन्होंने भारी कण्ठ से कहा, 'मेरी बात से तुम्हें मानसिक कष्ट पहुँचा ।'

'नहीं, चाचाजी !' रामू ने आँसुओं को मुस्कान में छुपाने की कोशिश करते हुए कहा, 'मुझे तो अपनी मजबूरी पर रोना आ गया कि मैं आपको नमस्ते तक करने लायक नहीं रहा ।'

'नहीं दोस्त !' शर्माजी ने इस कैफियत पर विश्वास न कर जैसे अपने को ही अपराधी मानते हुए कहा, 'तुम्हें मेरे व्यंग्य से ही चोट पहुँची है ।'

'न मानें, आपकी मर्जी !' रामू ने कहा, 'लेकिन सच बात सुनकर मुझे कभी चोट नहीं लगा करती। आपने ठीक ही तो कहा, मुझे अपनी ही तरह दूसरों को अपाहिज बनवा देने का कोई हक नहीं। मैं खुदगर्ज हूँ, स्वार्थी नम्बर एक !'

'हरगिज नहीं !' शर्माजी ने कहा, 'तुमने अपने हित के लिए हाथ नहीं कटवाया है। तुम्हारे दुश्मन भी तुम्हें स्वार्थी नहीं कह सकते। फिर, मैं तो तुम्हारा दुश्मन भी नहीं हूँ; क्योंकि तुम्हारे इस बलिदान से मेरी पुत्री स्वयं तुम्हारी भक्त हो गई है।'

रामू ने गहन आश्चर्य के साथ नीलिमा के चेहरे की ओर देखा। उसे विश्वास ही न हुआ। नीलिमा, जो उस दिन उसे डॉ० अखिल के भक्तों में से एक प्रतीत हुई थी, कैसे उसकी भक्त बन गई। किन्तु उससे दृष्टि मिलने पर आज नीलिमा मुस्करा उठी। रामू भी मुस्कराया और फिर नीलिमा के पिताजी की बात सुनने लगा।

'मैं आधुनिकतावादी होने के कारण हर बात में बच्चों से भी चार कदम आगे चलनेवाला हूँ।' शर्माजी मुस्कराते हुए कह रहे थे, 'इसी से मैं तुम्हें लेने आया हूँ। आज यहाँ से डिस्चार्ज मिलने पर तुम्हें कुछ दिन मेरे घर चलकर आराम करना होगा।'

'माफ कीजिएगा।' रामू ने किसी अनजान बच्चे की तरह मचलते हुए कहा, 'यहाँ से छूटते ही मैं घर जाऊँगा अपनी माँ के पास। माँ को मैंने बहुत दुख दिए हैं। अब उन्हें छोड़कर कहीं न जाऊँगा।'

'छोड़कर जाने को कौन कहता है भाई !' शर्माजी हँस पड़े, 'मैं तो यह चाहता हूँ कि माँ और तुम्हारी भाभी भी चलकर कुछ दिन हमारे गरीबखाने को पवित्र करें। लो, वह स्वयं ही आ गईं।'

'हाँ, बेटा।' माँ ने शर्माजी की बात के पिछले अंश को सुनकर प्राइवेट वार्ड के भीतर आते हुए मुस्कराकर कहा, 'इनकी बात को मना मत करो। इनकी बेटी ने तुम्हारी जान बचाई है। इन लोगों का भी अब तुम पर उतना ही हक है, जितना हम लोगों का।'

'यह बात है!' रामू मुस्करा उठा। उसे इस नाटकीय प्रसंग के पीछे बड़ों की कोई मधुर कूटनीति छिपी दिखाई पड़ी और अपने सौभाग्य पर उसे विश्वास न हुआ।

नीलिमा, जिसे पहली ही भेंट में रामू ने मन-ही-मन अपने आदर्शों की साकार प्रतिमा मान लिया था, क्या सचमुच उसे मिल जाएगी, हमेशा के लिए ? काश, ऐसा ही हो, और उसने 'अच्छा' कहकर अपने को समय के बहाव में छोड़ दिया।

१२

उस रात नीलिमा से बात करके शर्माजी को महसूस करना पड़ा कि यह अब किसी की बात मानेगी नहीं। अब दो ही रास्ते हैं: या तो शर्माजी कड़ाई करके सदा के लिए उससे—अपनी एकमात्र सन्तान से—बुरे बन जाएँ या उससे चार कदम आगे रहकर सारा श्रेय स्वयं ले लें।

कड़ाई करने पर भी यदि नीलिमा जैसी उच्च शिक्षाप्राप्त युवती नहीं मानी, तो गुनाहे-बेलज्जत ही रहा। इसलिए वह अब दूसरे मार्ग पर ही चलेंगे। वह किसी तरह यदि रामू के घर का पता लगाकर उससे और उसके अभिभावकों से परिचय प्राप्त कर लें, तो नीलिमा को अचानक चकित कर देंगे, जैसे बचपन में वह उसकी पसन्द का खिलौना चुपके से लाकर उसे चकित कर दिया करते थे।

दूसरे ही दिन संयोग से आन्दोलन, पथराव और गोलीकाण्ड का नाटक अभिनीत हो गया। शर्माजी घर पर ही थे, जब उन्हें नीलिमा से टेलीफ़ोन पर सारी बातें मालूम हुईं। उन्हें मर्मान्तक क्लेश हुआ कि उस व्यक्ति का एक हाथ कट रहा है, जिसको लेकर उनकी पुत्री भावुक हो रही थी। एक क्षण को उन्हें लगा कि अब वह उस युवक और उसके परिवार-वालों से मिलने का विचार स्थगित कर दें; किन्तु अब उनकी पुत्री की

श्रद्धा उस युवक पर दुगनी हो उठी है, यह भी फोन पर नीलिमा के स्वर से स्पष्ट था। यदि ऐसा न होता, तो एक अपरिचित युवक के घायल होने की खबर फोन से उन्हें क्यों देती वह ? क्या यह उसका एक संकेत नहीं है कि उसकी श्रद्धा में कोई कमी नहीं हुई है।

वह कुछ ही देर में अस्पताल में पहुँच गए और उन्हें मालूम हुआ कि नीलिमा और बड़े डाक्टर मेहता आपरेशन-रूम में रामू का आपरेशन करने में व्यस्त हैं। यह खबर उन्हें भीतर से आते डॉ० अखिल ने दी।

शर्माजी ने एक क्षण के लिए आपरेशन-रूम के बाहर जमा भीड़ पर दृष्टि डाली, किन्तु उस अपरिचित युवक के परिवारवालों को वह कैसे पहचानते ? अतः वह डाक्टर अखिल के साथ बातें करते, उसी के वार्ड की ओर बढ़ चले।

'आप आज कैसे इधर आ निकले पिताजी ?' अखिल ने पूछा। वह अपने अध्ययन-काल से ही नीलिमा के घर आने-जाने के कारण उसके माता-पिता से घनिष्ठ हो चुका था।

'उत्सुकतावश।' शर्माजी ने अपने मनोभावों को छिपाकर कहा, 'सुना है, पुलिस ने बुरी तरह मारपीट की है। गोली भी चली। कुछ लोगों के हाथ-पैर भी काटना पड़ रहे हैं !'

'कुछ के नहीं, सिर्फ एक युवक का हाथ कट रहा है। गोली कन्धे में लगी है। यदि हाथ न काटते, तो जहर फैलकर उसकी मौत का कारण बन जाता।' अखिल ने कहा, फिर वह कुछ याद करके व्यंग्य से मुस्कराया, 'यह वही नेताजी हैं, जिन पर नीलिमा जी की अटूट श्रद्धा थी।'

शर्माजी स्वयं अब तक नीलिमा की पसन्द को हृदय से अनुमोदित न कर सके थे; किन्तु अपनी पुत्री पर अखिल का यह व्यंग्य भी न सह सके और अखिल को जलाने के लिए मुस्कराकर बोल उठे, 'अब तो वह युवक मेरी भी श्रद्धा का पात्र बन गया है। यह मामूली बात नहीं कि पूरे मजदूर-समुदाय के हित के लिए वह बेचारा जिन्दगी भर को एक हाथ से वंचित हो गया।'

'कर्मों का फल हैं, और क्या !' अखिल ने निपट लापरवाही के साथ कह दिया, 'और कूदें राजनीति में ! फिर, इनका तो एक हाथ ही गया है, कई मजदूरों के सर फूट गए हैं और कई की जान ही जानेवाली है। लेकिन वे गुमनाम मजदूर हैं, नींव के पत्थर हैं, उन्हें क्यों कोई पूछेगा ? हाँ, नेताजी एक हाथ ही कटाकर लोकप्रिय हो जाएँगे और अगले किसी आम-चुनाव में उस लोकप्रियता का चैक भुनाकर एम. पी. या एम. एल. ए. बन जाएँगे।'

शर्माजी को डॉ० अखिल की ये बातें कुतर्क और अप्रासंगिक महसूस हुईं। जिसने त्याग किया है, उसे उसका कुछ लाभ मिलना ही चाहिए। उन्हें इसमें कोई बुराई नजर नहीं आई। रही बात गुमनाम मजदूरों के मरने की, सो अखिल ने यदि यह बात उन मजदूरों के प्रति सच्ची हमदर्दी से कही होती, तो शर्माजी उसके विचारों की प्रशंसा करते; लेकिन वह भाँप गए कि इस बात के पीछे मजदूरों के प्रति हमदर्दी कम है, रामू के प्रति अखिल की व्यक्तिगत ईर्ष्या अधिक।

'छोड़ो भी !' शर्माजी ने बुजुर्गोंवाली गंभीरता के साथ कहा, 'आज-कल स्वार्थ से कौन मुक्त है ? जो डाक्टर गरीब रोगियों को मुफ्त देख लेते हैं, उनके मन के किसी कोने में भी लोकप्रिय होने की इच्छा नहीं छिपी रहती, यह तुम कैसे कह सकते हो ?'

अखिल का मुँह उतर गया। उसकी सूरत पर बारह बजते देख, शर्माजी ने फिर बुजुर्गों की तरह मानो उसे पुचकारते हुए कहा, 'लेकिन मैं इसमें कोई बुराई नहीं देखता। यह तो बिलकुल स्वाभाविक है। लोक-प्रियता की कामना वह चीज है, जो मनुष्य को परोपकारी बना देती है, फिर चाहे वह डाक्टर हो, नेता हो, या कोई भी हो।'

'तो आप निष्काम कर्म के आदर्श को क्या कहेंगे ?' अखिल ने विचलित स्वर में पूछा।

'निरा ढोंग !' शर्माजी ने हँसकर जवाब दिया, 'कर्म हमेशा कामना से प्रेरित रहा करता है। पुराने ऋषि-मुनियों का संसार-त्याग भी निष्काम

नहीं होता था। उसके पीछे स्वर्ग या मोक्ष-प्राप्ति की कामना रहती थी। आज के युग में कामनाओं की सिर्फ शक्ल बदल गई है। फैक्टरी में धन लगानेवाले रईस से लेकर आन्दोलन करनेवाले मजदूर तक कोई निष्काम नहीं है, न हो सकता है। निष्काम होते ही वह निष्क्रिय हो जाएगा। इसलिए आज जो भी परोपकार कर रहा है, वह पूजा के ही योग्य है, चाहे वह परोपकार सकाम हो या निष्काम।'

शर्माजी अपने समय में राजनीति के एक सफल प्रोफेसर थे, अतः आज भी जब वह लैक्चर देने लगते हैं, तो दूसरों को निरुत्तर कर देते हैं। अखिल भी उनके विचारों के खण्डन में कुछ न कह सका।

वे दोनों बातों-बातों में अखिल के वार्ड की ओर आ निकले थे, जहाँ एकदम सन्नाटा था। अधिकांश लोग डाक्टर नीलिमा के ही वार्ड की ओर गए हुए थे।

'अच्छा, मैं भी उधर ही चलता हूँ,' शर्माजी ने कलाई-घड़ी देखते हुए कहा, 'शायद नीलिमा अब तक आपरेशन करके अपने कक्ष में आ गई हो।'

सचमुच जब शर्माजी पुनः आपरेशन-रूम के सामने आए, तो एक हाथ कटे बेहोश युवक को स्ट्रेचर पर लिटाकर एक प्राइवेट वार्ड की तरफ ले जाया जा रहा था। यह प्राइवेट वार्ड उसे नीलिमा के संकेत पर तत्काल दे दिया गया था।

रामू की माँ और भाभी डबडबाए नेत्रों से बेहोश रामू को देखतीं स्ट्रेचर के साथ चल रही थीं। नीलिमा उन्हें धैर्य बँधाती जा रही थी।

'पिताजी!' सहसा नीलिमा ने ठिठककर कहा और उन्हें पास बुलाकर रामू की माँ और भाभी से परिचित करा दिया।

'नमस्ते बहिन!' शर्माजी ने अभिवादन किया।

'नमस्ते!' रामू की माँ ने उस दुःख की घड़ी में भी कृतज्ञता प्रकट करना न भूलते हुए कहा, 'आपकी बेटी ने मेरे बेटे को बचा लिया। मैं यह अहसान कभी नहीं भूल सकती।'

'यह तो हम लोगों का फर्ज है माँजी!' नीलिमा ने लज्जापूर्ण मुस्कान

के साथ कहा, 'फिर आपरेशन तो हम सभी डाक्टरों के मिले-जुले प्रयत्न का फल है।'

'जहाँ कोई अपना हो,' माँ ने नम्रता के स्वर में कहा, 'वहाँ दूसरे भी दयालु हो जाते हैं। हम लोग तो यहाँ बस, तुम्हें जानते हैं बेटी!'

प्राइवेट वार्ड के सामने अब तक ये सब पहुँच चुके थे। रामू को अन्दर आराम से एक गद्देदार पलंग पर लिटा दिया गया।

'आज की रात हम लोगों की जागते ही बीतेगी!' नीलिमा ने कहा, 'बीच में किसी बात की जरूरत न पड़ जाए, इसलिए आज मेरा यहीं रहना जरूरी है। माँ जी, आप चाहें तो आज रात जाकर चैन से सो लीजिए। कल से पेशेण्ट को होश आने पर आपकी यहाँ अधिक जरूरत पड़ेगी, तब आपको यहीं रहना होगा।'

'ठीक तो है।' शर्माजी बीच में ही बोल उठे, 'आज रात की जिम्मेदारी डॉक्टरों की है बहिन। अब रात में आप गाँव कैसे लौटेंगी? आज की रात आप मेरे घर हो चली चलें। मेरी पत्नी आपसे मिलकर बहुत प्रसन्न होंगी।'

'लेकिन रात में यहाँ घर का भी तो कोई रहना चाहिए।' माँ ने हिचकिचाते हुए कहा।

'हम लोग बाहर के नहीं हैं बहिन!' शर्माजी ने मुस्कराकर कहा।

'नहीं, मेरा यह मतलब नहीं था....।' माँ कुछ कैफियत देने जा रही थीं कि आभा ने कहा, 'मैं यहाँ रह जाती हूँ माँजी! नीलिमा बहिनजी को भी अकेले बुरा न लगेगा।'

'मैं आपसे छोटी हूँ,' नीलिमा ने 'बहिनजी' सम्बोधन पर टोक दिया।

'पर ......' आभा शायद कहना चाहती थी, 'आप पढ़ी-लिखी हैं, डॉक्टर हैं, और मैं ठहरी निपट गँवार।' किन्तु वह चुप रह गई कि कहीं उन्हें बुरा न लग जाए।

'अच्छा, तो तुम लोग सुलझो!' स्नेह भरी मुस्कान से कहती रामू की माँ शर्माजी के साथ बाहर निकल आईं। शायद शर्माजी के मधुर व्यवहार

और नीलिमा से जुड़ गए स्नेह के नए बन्धन ने, रामू के हाथ कटने के भीषण दुःख में भी एक संयम-सा उत्पन्न कर दिया था उनमें।

टैक्सी में बैठे हुए बातों ही बातों में शर्माजी को यह मालूम हो गया कि रामू की राजनीतिक गतिविधियों से उसकी माँ परेशान हैं, बल्कि उसका सारा घर परेशान है। गाँव में कोई एक साधु बाबा साम्य की विचारधारा का प्रचार करते फिरते हैं और उसी अनिष्टकारी विचार-धारा का परिणाम आज सामने आ गया है।

'बात यह है बहिन!' शर्माजी ने मुस्कराकर कहा, 'नई उम्र में सभी के विचार ऐसे होते हैं। आपकी तरह मैं भी मान लेता हूँ कि दुनिया में सब लोग कभी बराबर नहीं हुए, न कभी होंगे। लेकिन सवाल यह है कि क्या हम अपने ये विचार इन नए लड़के-लड़कियों के मन में बैठा सकेंगे, जिनके मन में साम्य का सिद्धान्त जमा हुआ है? यदि किसी बर्तन में गेहूँ भरा है, तो कितना ही चावल उसमें डालिए, सब इधर-उधर से गिर जाएगा। चावल भरना है, तो पहले गेहूँ निकालना होगा।'

'किन्तु वह निकाला कैसे जाए, यही तो नहीं मालूम!' रामू की माँ कह बैठीं।

'वह खुद ही निकल जाता है संसार की झंझटों से टकराने पर।' शर्माजी ने रामू की माँ के विचारों की थाह लेने की चेष्टा करते हुए कहा, 'आप अपने लड़के की शादी कर डालिए।'

'शादी!' माँ की आँखें भर आईं, 'उससे अब कौन लड़की शादी करेगी भला? और, कोई लड़की तैयार भी हो, तो शायद वह अब खुद तैयार न होगा, किसी लड़की की ज़िन्दगी बर्बाद करने के लिए।'

शर्माजी सोच में पड़ गए। समस्या के इस पहलू पर उन्होंने विचार न किया था। यदि वह आदर्शवादी लड़का खुद ही न माना? उँह! मानेगा कैसे नहीं! मनुष्य पहले मनुष्य है, बाद में उसके 'वाद' या उसकी विचारधारा।

लड़की अपने को भाग्यशालिनी समझेगी बहिन !' शर्माजी ने कहा, 'यदि आप इसे उस आपरेशन की कीमत न समझ बैठें, जो नीलिमा ने किया है, तो मैं सरल मन से कहता हूँ, मेरी लड़की खुशी से आपकी बहू बनना पसन्द करेगी !'

'सच !' रामू की माँ टैक्सी की सीट पर ही खुशी से उछल पड़ीं, किन्तु तभी यकायक उनका चेहरा बुझ-सा गया, 'लेकिन नहीं । हम लोग इस लायक नहीं ।'

'क्यों ?' शर्माजी ने अपने दिमाग पर कुछ जोर देकर पूछा । उनकी समझ में न आया कि अब क्या दिक्कत है ?

'हम जात में भी आपसे छोटे हैं,' माँ ने कहा, 'और पैसे में भी । आप बाह्मन हैं, हम ठाकुर । आप साहब हैं, हम किसान । आप....'

'ओफ्फोह !' शर्माजी हँस पड़े, 'आप तो ऐसे कह रही हैं, जैसे आप लोग हिन्दुस्तानी हों और हम लोग जापानी ! आप लोग मानव हों, हम लोग दानव ! चूंकि इनमें भेद ईश्वर या कुदरत ने बनाया है, इसलिए हम उसे तोड़ नहीं सकते । लेकिन यदि किसी कलैक्टर का बेटा कलैक्टर बन गया हो, तो इसका यह मतलब नहीं कि चपरासी का बेटा कलैक्टर नहीं बन सकता !'

'तो बाह्मन-ठाकुर वगैरह जातियाँ भगवान् की बनाई नहीं ?' रामू की माँ ने शर्माजी की बात पर अपनी शंका का समाधान करना चाहा, 'इनको तोड़ने में कोई पाप नहीं ?'

'यदि ये जातियाँ भगवान् की बनाई होतीं,' शर्माजी ने मुस्कराते हुए कहा, 'तो ब्राह्मण का बच्चा जनेऊ-चोटी के साथ पैदा होता और शूद्र का बच्चा झाड़ू-टोकरी के साथ । ये चीजें तो बच्चे स्वभावतः अपने माता-पिता से ग्रहण करते हैं और हम लोग जाति को जन्म से प्राप्त या ईश्वरीय विधान समझ लेते हैं ।'

'तो फिर जाति क्या है, क्यों है ?' रामू की माँ ने शर्माजी के ज्ञान से प्रभावित होते हुए उसका लाभ उठाने के लिए पूछा ।

'जाति-व्यवस्था एक सामाजिक प्रयोग था,' शर्माजी ने कहा, 'अपने युग को देखते हुए वह बहुत उचित था। जाति-व्यवस्था के जन्मदाताओं का शायद विचार था कि बल, बुद्धि और धन पर किसी एक वर्ग का एकाधिकार खतरनाक हो सकता है, अतः ये तीनों अलग-अलग वर्गों के लिए निश्चित कर दिए गए। तब हर मनुष्य जन्म से शूद्र होता था। हाँ, वह धन से वैश्य, बल से क्षत्रिय और विद्या से ब्राह्मण बन सकता था।' कहकर शर्माजी थोड़ा ठहरे, टैक्सी की खिड़की से झाँककर देखा, रास्ता अब थोड़ा ही बाकी था।

'धीरे-धीरे हर बाप अपना हुनर अपने बेटे को सिखलाने लगा। तभी से ब्राह्मण का लड़का ब्राह्मण और चमार का लड़का चमार होने लगा। एक वर्ण से दूसरे में जाने पर रोक लगा दी गई और शूद्रों को सदा के लिए अपनी दयनीय दशा स्वीकार कर लेनी पड़ी। इस प्रकार एकाधिकार पर रोक लगाने के लिए जो व्यवस्था चली थी, वही ब्राह्मणों के एकाधिकार का साधन बनकर रह गई और हिन्दू समाज शूद्रों के लिए जेलखाना बन गया।'

रामू की माँ कुछ-कुछ समझ चली थीं। शर्माजी के शब्द उनके हृदय की गहराइयों में उतरते चले जा रहे थे। उनकी आँखों से एक के बाद एक पर्दा हटता जा रहा था और सुदूर अतीत के दृश्य उनके मानस-पटल पर बन-बिगड़ रहे थे।

'किन्तु गौतम बुद्ध जैसे क्रान्तिकारियों ने इस एकाधिकार पर चोट की। कबीर ने सभी जातियों को उस एक ही घट-घटवासी ब्रह्म का स्वरूप बतलाया। तुलसी ने 'सिया-राममय सब जग जानी' का उद्घोष किया। अकबर ने हिन्दू स्त्रियों से विवाह किए, गालिब ने मुल्लाओं के 'जन्नत की हकीकत' खोल दी और हमारे इसी युग के सन्त राष्ट्रपिता गान्धी ने संकीर्ण जातीयता को राष्ट्रीयता के लिए घातक बताया।'

'बस-बस!' रामू की माँ गद्‌गद कण्ठ से बोल उठीं, 'मैं तो इन महात्माओं के पैरों की धूल भी नहीं हूँ। जब आप अपने से नीचे की जात

के हम लोगों को बिटिया देने में नहीं हिचकते, तो हम क्यों मना करेंगे ? ऐसे अभागे हम लोग नहीं हैं। लेकिन मेहरबानी करके अपने इस ज्ञान में से कुछ मेरे रामू को भी सिखा दीजिएगा, जिससे वह आर्टी-पार्टी से अब दूर ही रहे।'

टैक्सी शर्माजी के बँगले के सामने जा रुकी। शर्माजी और रामू की माँ उतर पड़े।

'अब सब ठीक हो जाएगा।' शर्माजी ने अपने बँगले के फाटक को टार्च की रोशनी में खोलते हुए कहा, 'अब आपका बेटा मेरा बेटा है और मेरी बेटी आपकी बेटी। हम और आप जो करेंगे, उन दोनों का भविष्य बनाने के लिए ही करेंगे।'

१३

श्री सेठी आज दिन भर से उद्विग्न और परेशान हैं। आज न तो उन्हें सुबह की चाय में स्वाद आया, न समय पर भोजन करने की ही इच्छा हुई। बारबार भोजन के लिए आग्रह करने पर उन्होंने रसोइए को डाँट दिया—'तू खा ले और जा भैया! आज मैं नहीं खाऊँगा। मेरा सर मत खा!'

सुबह का अखबार पढ़कर उन्होंने जहाँ फेंक दिया था, वह अब तक वहीं पड़ा है। लाठी-गोली चलने और रामू के घायल होने का समाचार पढ़कर वह सुबह-ही-सुबह रामू को देखने अस्पताल जा पहुँचे थे।

रामू उस समय तक जागा नहीं था। उसका एक हाथ कटा देखकर सेठी को लगा, जैसे उनके हृदय पर हथौड़े से किसी ने गहरी चोट कर दी हो। रामू के होश में आने पर उससे आँखें मिलाने की कल्पना ही उन्हें इतनी कष्टकर लगी कि वह रामू के घर की अपरिचित महिलाओं से जल्दी-जल्दी सहानुभूति व्यक्त कर और अपने परिचित—अस्पताल के बड़े

डाक्टर मेहता से, रामू का विशेष खयाल रखने का आग्रह करके घर लौट आए।

घर लौटकर वह भोजन किए बिना ही खामोश अपने बिस्तर पर जा लेटे और सिगरेट पर सिगरेट फूँकने लगे।

रामू की जिन्दगी बर्बाद करने का जिम्मेदार कौन है ? रामू स्वयं ? या पुलिस के क्रूर अफ़सर ? या बदमाश मनीराम ? नहीं, नहीं, उनके मन ने कहा, इसके सबसे बड़े जिम्मेदार हैं वह स्वयं। वह चाहते, तो रामू को या पुलिस को उक्त वारदात से एक दिन पहले ही, मनीराम के इरादों की सूचना दे सकते थे। लेकिन वह रुपए, जो उन्होंने मनीराम से लिए थे ? भले ही अपनी समझ में उन्होंने वे रुपए कुछ गरीबों के सहायतार्थ ही लिए थे; लेकिन वही रुपए अब एक दूसरे गरीब को डस लेने वाले काले साँप बन गए, जिन्होंने रामू के जीवन में तो हमेशा के लिए ज़हर घोल ही दिया, साथ ही सेठी के सिद्धान्तों, उनकी आत्मा और बीस साल के उनके तप को भी ज़हरीला कर दिया।

आज से बीस साल पहले भी सेठी से एक ऐसा ही काम हो गया था। उन्होंने अपनी नवविवाहिता पत्नी को शादी के बाद साल भर के भीतर ही त्याग दिया था, यह कहकर कि वह साँवली है और उसके माँ-बाप ने सेठी को धोखा दिया है। किन्तु सेठी जानते थे कि यह कैफियत दूसरों को भले ही सन्तुष्ट कर सकती हो, स्वयं उन्हीं की आत्मा को सन्तुष्ट न कर सकती थी।

यह ठीक था कि अरुणा साँवली थी, किन्तु यह भी उतना ही ठीक था कि वह शादी के पहले उसे देख चुके थे और पसन्द कर चुके थे। हाँ, शादी के बाद साल भर में ही उससे अधिक सुन्दर और गोरी कुछ लड़कियाँ उनके सम्पर्क में आ गई थीं, जिन्हें देख लेने के बाद सेठी अरुणा को पहले जैसा प्रेम देने में अपने को असमर्थ पाते थे। इसलिए उन्होंने उसे उसके मायके भेजकर एक पत्र द्वारा उसके माँ-बाप को अपना निश्चय लिख भेजा और आवश्यक होने पर उसे 'गुजारा' दे देने की स्वीकृति भी

व्यक्त कर दी। लेकिन एक सप्ताह में ही उन्हें पता चला कि अरुणा ने आत्महत्या कर ली है।

सेठी उस समय बीस वर्ष के एक तरुण थे। लेकिन उस घटना के बाद फिर वह दूसरी शादी करने का साहस न जुटा सके। एक हँसती-खेलती जिन्दगी उनके कारण मौत की घाटियों में खो गई थी, अतः अब अपना भी हँसने-खेलने का कोई अधिकार नहीं समझते थे वह।

उसी वर्ष देश आजाद हो गया और साम्प्रदायिक दर्शन के अनुयायी एक पागल की गोली खाकर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी 'हे राम !' कहते हुए सदा के लिए अपने मनचीते राम के मन्दिर में पहुँच गए।

बापू की मौत से प्रभावित होनेवाले असंख्य युवकों में से सेठी भी एक थे। उन्होंने महसूस किया कि आज़ादी पा लेना किसी देश के लिए बहुत कठिन नहीं है। कठिन है उस आज़ादी की रक्षा करना ! बापू की मौत एक चेतावनी थी देश के नेताओं के लिए कि आज़ादी को दो तरफ से खतरा है—साम्प्रदायिकता से और हिंसा से।

सेठी तभी से मैदान में कूद पड़े। उन्होंने एक ऐसी यूनियन को अपनाया, जिसका कार्यक्षेत्र था मजदूर-किसानों के बीच, और उद्देश्य था हिंसा और साम्प्रदायिकता को मजदूरों में पैर न जमाने देना।

जल्दी ही सेठी एक मामूली सदस्य की हैसियत से उठकर उस यूनियन की प्रादेशिक शाखा के अध्यक्ष बन गए। उन्होंने यूनियन के क्षेत्र में भी विस्तार कर दिया। अब उनकी यूनियन सिर्फ मजदूरों को उपदेश न देकर, उन पर होनेवाले अन्यायों के विरुद्ध भी आवाज़ उठाने लगी।

इस काम में जब कभी सेठी को मंत्रियों या मिल-मालिकों से अपशब्द सुनने को मिलते, अपमान या झिड़कियाँ मिलतीं, उनकी आँखों में अरुणा का मासूम चेहरा घूम जाता, जिसे उनकी ओर से हमेशा अपमान और झिड़कियाँ ही सुनने को मिली थीं। 'उस पाप का यही प्रायश्चित्त है,' वह सोचते और उनका चेहरा पत्थर का हो जाता। वह बिना किसी प्रतिकार के सब सह लेते, उलटकर क्रोध का एक शब्द भी मुंह से न निकालते।

गालियाँ सुनानेवाले इस सहनशीलता पर चकित और प्रभावित हो जाते और इसी 'प्रभाव' के वशीभूत हो, मजदूरों का कुछ-न-कुछ भला कलम की नोक से कर ही बैठते ।

'सेठी साहब देवता हैं' मजदूर कहते, 'गान्धीजी के दूसरे अवतार समझो । क्रोध पर ऐसी विजय तो ऋषि-मुनियों ने भी नहीं पाई होगी ।'

सेठी साहब क्या हैं, यह वह स्वयं अच्छी तरह जानते थे, लेकिन मजदूरों और किसानों ने उन्हें इतना ऊँचा उठा दिया, कि धीरे-धीरे स्वयं सेठी भी अपने को दूसरों से कुछ अधिक मानने लगे । उनके हाथों जो कुछ होगा, गरीबों की भलाई उसी में होगी, ऐसा उन्हें विश्वास होता गया ।

और, वही विश्वास कल दगा दे गया । एक वार फिर उनकी वुद्धि ने उन्हें छल लिया । फिर एक जिन्दगी उनके हाथों मौत के मुंह की तरफ ढकेल दी गई ! अब वह क्या करें, क्या न करें ?

सोचते-सोचते कब निद्रा ने उन्हें अपनी गोद में समेट लिया, वह जान न सके ।

जागरण की चिन्ताएँ निद्रा में स्वप्न का रूप ले लेती हैं ।

एक आवाज से सेठी उठे । कमरे में अन्धकार है । क्या वह दिन भर सोते रहे ! तभी फिर वही आवाज ! जैसे कोई रो रहा है, सिसकियाँ ले रहा है, धीमे-धीमे स्वरों में ! इसी कमरे में, इसी अँधेरे में छिपा कोई रो रहा है !

उन्होंने बैड-स्विच दबा दिया । जीरो पावर के वल्व की रोशनी में उन्होंने एक अविश्वसनीय दृश्य देखा—एक दुवला-पतला, वृद्ध व्यक्ति, घुटा हुआ गंजा सिर, तन पर लँगोटी, पैरों में चप्पल और हाथ में पतली-सी लाठी लिये उनकी मेज के पास खड़ा है और अब भी धीरे-धीरे सिसक रहा है !

यह क्या ? बापू ! असम्भव ! सेठी ने सिर को एक झटका दिया और उछलकर उनके समीप जा पहुँचे ।

वह व्यक्ति अब उनकी ओर उन्मुख हुआ !

'बापू, आप !' सेठी आश्चर्य से चिल्ला पड़े और स्याही-पुते उसके चेहरे को देखकर भय से पीछे हट गए, 'आपके....आपके मुँह पर यह कालिख कैसे लगी ?'

'तुम जैसे मेरे ही शिष्यों के हाथों लगी है।' कहते हुए उस सौम्य आकृति की आँखों से दो बूंद आँसू और लुढ़क गए।

'मेरे हाथों ?' सेठी ने काँपते हुए अपने दोनों हाथों को देखा—सच-मुच, उनकी हथेलियों में डामल पुता हुआ था !

स्वप्न भंग हो गया ! सेठी पसीने-पसीने से उठ बैठे। कोई चार बजे सायंकाल का वक्त था, कमरे में पर्याप्त प्रकाश था, और सामने वाली खिड़की के ऊपर टँगे चित्र में बापू स्निग्ध दृष्टि से मुस्करा रहे थे।

सेठी उठे, बाथरूम में जाकर कुल्ला किया। हाथ-मुँह धोने लगे। नल शोर करता हुआ चल रहा था, और सेठी अपने स्वप्न पर विचार कर रहे थे। स्वप्न उन्हीं के विचारों का परिणाम तो था। सोते समय उनके मन में यही विचार था कि उन्होंने एक सत्य को छुपाकर बापू के मुँह पर कालिख पोत दी है। वही नींद में साकार हो उठा।

सेठी को भूख लग आई थी। रसोईघर में ढका सुबह का ठण्डा खाना खाने का मन न हुआ। पाजामा-शेरवानी पहनी और चले पास के एक बड़े-से रेस्टराँ की तरफ।

'हलो मि० सेठी !' एक नारी-कंठ ने उल्लसित स्वर में कहा और उन्होंने उधर देखा—मिस रायजादा ! उनकी मित्र और प्रशंसक महिला।

अरुणा की मौत के बाद कुछ दिन तो सेठी साहब को 'सोसाइटी गर्ल्स' से नफरत-सी हो गई थी, जिनके आकर्षण में बँधकर सेठी साहब से वह 'हत्या' हुई थी; किन्तु धीरे-धीरे वह नफरत कम होती गई और अब तो उनकी बहुत-सी प्रशंसक महिलाएँ उनके यहाँ आती-जाती रहती हैं। सेठी साहब उन्हें खिलाते-पिलाते हैं, उनका किसी 'अफसर' से कोई काम अटका हो, तो उसे भी करवा देते हैं, और बदले में वे सेठी साहब के जीवन में फूल बिखेर दिया करती हैं। 'यह सौदा महँगा नहीं'—सेठी

साहब प्रायः यह सोचकर मुस्करा देते हैं—'कितनी सस्ती हैं ये लड़कियाँ और कितना सस्ता है इनका शरीर ! अरुणा जैसी स्वाभिमानिनी, एक की होकर रहनेवाली कोई है इनमें ?'

'हलो, मिस• रायजादा !' सेठी ने मुस्कराकर कहा, 'सवारी किधर चली ?'

'चली तो थी आपके घर की तरफ,' मिस रायजादा ने मुस्कराकर अदा से कहा, 'अब आप जिधर ले जाएँ। वैसे मुंह मीठा नहीं करवा रहे हैं ?'

'किस खुशी में ?' सेठी ने हैरत से पूछा और मिस रायजादा के साथ ही कोलाहल भरे रेस्टराँ के दरवाजे में प्रविष्ट हो गए। मिस रायजादा ने कोई उत्तर न दिया, जब तक ये लोग भीतर जाकर एक फैमिली केबिन में न बैठ गए।

'हाँ, अब कहिए न किस खुशी में ?' सेठी ने पूछा और बैरे को चाय तथा कुछ मीठा लाने का संकेत कर दिया। बैरा उनका पुराना परिचित था और अच्छी 'टिप' मिलने के कारण उनके संकेतों पर दौड़ जाता था।

'क्या आप नहीं जानते कि आपका एक खासा विरोधी,' मिस रायजादा ने मुस्कराकर कहा, 'जख्मी होकर हास्पिटल में पड़ा है और एक हाथ कट जाने से पोलिटिकल एक्टीविटीज के लिए भी बेकार हो गया है !'

'मिस रायजादा !' सेठी को लगा, जैसे उनके मुँह पर एक थप्पड़ लगा हो, 'मैं इतना नीच नहीं। उस बेचारे के घायल हो जाने से मेरा क्या फायदा ?'

'बाबा रे !' मिस रायजादा अभिनय के साथ बोलीं, 'इतना गरम क्यों होते हैं ? मुझे तो मनीरामजी से मालूम हुआ कि परसों रात की सभा में उस व्यक्ति ने आपकी बखिया उधेड़कर रख दी। फिर भी आप कहते हैं........'

'जनतंत्र में ऐसे मतभेद हुआ ही करते हैं,' सेठी ने कहा, 'लेकिन लोग एक-दूसरे के शत्रु नहीं बन जाते। रही बात मनीरामजी की, सो

अब मैं उनका नाम भी सुनने से नफरत करता हूँ ! कल की दुर्घटना में उन महाशय के दल का भी कम हाथ नहीं है ।'

'मुझे भी मनीराम से उतनी ही नफरत है, जितनी आपको ।' मिस रायजादा ने कहा, फिर वह कुछ भावुक हो उठीं, 'मुझे स्ट्रीट गर्ल बना देने का श्रेय उसी मक्कार को है । यदि मेरी गरीबी का फायदा उठाकर वह पहली बार मेरी आबरू से न खेलता....। लेकिन छोड़िए, लम्बी कहानी है । अब तो मैं उसे सिर्फ बेवकूफ बनाने के लिए उसके यहाँ आमद-रफ्त रखती हूँ । कल की दुर्घटना में उसके हाथ होने का मुझे भी पता है ।'

'फिर भी अभी आप कह रही थीं कि मुझे कल की घटना से खुश होना चाहिए ?' सेठी ने व्यंग्य से कहा ।

'जी हाँ, क्योंकि इस घटना से मनीराम जैसा बदमाश भी सदा के लिए आपकी मुट्ठी में आ गया ।' मिस रायजादा सोत्साह बोलीं, 'उसने धर्म के नाम पर लोगों को खूब लूटा है; अब बाकी जीवन-भर आप उसे लूटिए—भेद खोल देने की धमकी देकर ।'

'यानी लुटेरे के साथ मैं भी लुटेरा बनूँ ?' सेठी ने पूछा ।

'क्या हर्ज है ! विषस्य विषमौपधम् !' मिस रायजादा मुस्कराईं, जैसे उनकी दृष्टि में अपनी आबरू से खेलनेवाले मनीराम के लिए प्रतिहिंसा नाच रही थी ।

'विषस्य विषमौषधम् !' सेठी मुस्कराए—इसी नीति का दुष्परिणाम तो वह देख रहे थे । इसी पर चलकर तो उन्होंने मनीराम का रुपया स्वीकार किया था, फलस्वरूप रामू अपाहिज हुआ, वह स्वयं अपराधियों को जानते हुए भी कुछ न कर सके । नहीं, अब वह धोखे में नहीं आ सकते । क्या ताज्जुब, मनीराम ने ही इस लड़की को उनके पास भेजा हो, सदा के लिए रहस्य को रहस्य रखने का सौदा करने के लिए ? अब यहाँ रुकना श्रेयस्कर नहीं, क्या पता फिर उन पर उसके शब्दों का जादू चल जाए और बापू के मुँह पर लगी कालिख और गहरी हो जाए !

'मिस रायजादा,' वह उठ खड़े हुए, "यहीं पर आपमें और मुझमें

फर्क है। आप बुरे से नफरत करती हैं, बुराई से नहीं। लेकिन मैं बुराई से अधिक नफरत करता हूँ। इससे मैं बुरे के साथ बुरा नहीं बन सकता। मनीराम को सजा अवश्य मिलेगी, लेकिन दूसरे उचित रास्ते से। अब चलता हूँ, वन्दे !'

वह एक दरवाजे से बाहर निकल गए और दूसरे दरवाजे से चाय और मिठाई की ट्रे लिये बैरा प्रविष्ट हुआ। उसने ताज्जुब से देखा—साहब का पता नहीं है। मेमसाब खिसियाई-सी खिसकने की तैयारी में हैं। जरूर इन्होंने टिप देनेवाले उदार 'साहब' को अपनी जली-कटी बातों से भगा दिया होगा। उसे समझ में न आया कि ट्रे का माल वह स्वयं 'साफ' कर दे या इन मेमसाब के सर से मार दे। वह भुनभुनाता निकल गया।

सारा अभिनय व्यर्थ गया—मिस रायजादा सड़क पर चलते हुए सोच रही थीं—अब वह मनीरामजी को क्या जवाब देंगी ? यदि वह इस अभि-नय की 'कीमत' वापस माँग बैठे, तो वह कहाँ से देंगी ? वह तो माँ की दवा और भाई की फीस में ही खर्च हो गई। पहले का भी काफी पैसा मनीराम का उस पर निकलता है। क्या भगवान् ने आत्महत्या ही उसके भाग्य में लिखी है ?

इन्हीं खयालों में वह मनीराम के अर्ध राजनीतिक धार्मिक दल के कार्यालय में पहुँच गई।

कार्यालय सूना था। एक कमरे में बिजली जल रही थी। मनीराम जी गद्दी पर बैठे पान खा रहे थे। उसके पहुँचते ही उन्होंने स्वाभाविक मुस्कान से बत्तीसी निपोर दी।

'सफलता मिली ?'

'नहीं।'

'नहीं ?' मनीराम की मुस्कान गायब हो गई, 'तब वापस करो मेरा रुपया।'

'जी-जी, आपका रुपया कहीं नहीं जाएगा।' मिस रायजादा ने रुआँसी होकर कहा, 'मैं कुछ समय चाहती हूँ।'

'पिछला भी तो वाकी है,' मनीराम ने मुस्कान से व्यंग्य किया, 'अब मैं और इन्तजार नहीं कर सकता ! सफलता या रुपया ! तीसरा कोई रास्ता नहीं । लेकिन ठहरो, एक तीसरा भी रास्ता है।' कहते हुए मनीराम का हाथ विजली के स्विच पर जा पड़ा ।

'नहीं !' मिस रायजादा भयभीत कबूतरी की तरह फड़फड़ा उठी, किन्तु उसकी अनिच्छा के बावजूद कुछ ही मिनटों में वहाँ अंधकार में वह सब घटित हो रहा था, जिसका मनीराम के नामोल्लेख-सहित कल्पित वर्णन वह अभी कुछ देर पहले सेठी के सामने कर चुकी थी ।

१४

कमला ने यद्यपि अपने पति की इच्छानुसार स्वयं को काफी बदल लिया था, फिर भी एक दबा-दबा-सा असन्तोष उन्हें अभी भी व्यथित करता रहता था—'इनके नए विचार और पत्नी को समान अधिकार देने के सिद्धान्त केवल बाहर वालों पर सिक्का जमाने के लिए है। घर में अपने सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करना शायद इनकी आधुनिकता की परिभाषा में शामिल नहीं।' तभी तो कमला की प्रायः सभी बातों को 'तुम नासमझ हो' या 'पोंगापंथी मत बनो' कहकर वह उड़ा देते हैं ।

उस समय यह असन्तोष अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया, जब शर्माजी ने नीलिमा के भावी जीवन के सम्बन्ध में भी पत्नी की राय मानने से साफ इनकार कर दिया ।

'लड़की यदि कुएँ में गिरने ज़ा रही हो, तो तुम क्या करोगे ?' उन्होंने तीखे स्वर में पति से पूछा था ।

'उसे रोकूँगा, फिर भी न माने, तो ताले में बन्द कर दूँगा ।' शर्माजी ने हँसकर कहा ।

'फिर जब वह एक अपाहिज पर मोहित हो रही है', कमला ने कहा, 'तब भी क्या तुम्हारा यह फर्ज नहीं कि उसे रोको ?'

'बिलकुल नहीं।' शर्माजी ने कहा, 'बच्चों को रोकने और समझाने की एक उम्र होती है। उसके बाद वे खुद समझदार हो जाते हैं। जिसको हम-तुम कुआँ समझते हैं, मुमकिन है, उसे वह सुखों का द्वार समझती हो !'

'उसकी आँखों पर तो मोह का पर्दा पड़ा है,' कमला ने खिसियाकर कहा, 'जब यह पर्दा हटेगा, तब तक वह अकाट्य बन्धन में बँध चुकेगी।'

'मोह का पर्दा उसकी आँखों पर पड़ा है या हमारी आँखों पर ?' शर्माजी ने हँसकर कहा, 'इसका फैसला कौन करे ? हम-तुम अब बूढ़े हुए, और बूढ़ों की दृष्टि स्वभावतः कमजोर हो जाती है। अब हमें इन युवक-युवतियों की दृष्टि पर विश्वास रखना चाहिए।'

इतना कहकर शर्माजी अस्पताल चले गए और कमला बैठे-बैठे कुण्ठित होती रही। पति की आधुनिकता से यह घर बर्बाद होकर रहेगा, इसमें उन्हें कोई शक न रहा। आज लड़की एक अपाहिज युवक से शादी करने को कहती है, तो यह शादी कर देने को तैयार हैं। कल को वह यथार्थ के आघात न झेल सकने के कारण तलाक देने को कहेगी, तो यह तलाक भी दिलवा देंगे ! पश्चिम की नारी इनके लिए आदर्श है। भारतीयता से इन्हें कोई लगाव नहीं। नीलिमा भी बिलकुल अपने पिता की छाया है—पूरी बेशर्म ! आखिर वह बाप से इतना सब कह कैसे सकी ? उनके अपने समय में तो……!

इन विचारों में वह कितनी देर खोई रहीं, कहना कठिन है। सोफे पर बैठे-बैठे उनकी आँख लग गई।

उनकी आँख खुली उस समय, जब शर्माजी रामू की माँ को लेकर लौटे। क्रोध तो कमला को उस स्त्री पर भी कम न आ रहा था, लेकिन मन में यही सोचकर चुप रहीं कि उसका क्या दोष ? झगड़ा तो उनका

अपने पति से है। पति से वह बाद में निपट लेंगी। अभी शिष्टाचार दिखलाने में कमी क्यों रहने दें?

उन्होंने गरम-गरम चाय बनाकर दोनों को दी, एक कप स्वयं पिया, और काफी देर इस अपरिचित महिला के पुत्र की तबीयत वगैरह के बारे में उनसे सवाल-जवाब करने के बाद उन्हें अपने शयन-कक्ष में ले गईं। शर्माजी दूसरे कमरे में सोए।

दूसरे दिन अपरिचित महिला अस्पताल के प्राइवेट वार्ड में रहने के लिए चली गई; किन्तु पति के अनुरोध के बावजूद कमला उस युवक को देखने अस्पताल नहीं गई।

लगभग एक सप्ताह बाद जब शर्माजी नाटकीय ढंग से रामू को सपरिवार घर ले आने के इरादे से चलने लगे, तो कमला से चुप न रहा गया, 'आखिर इस घर में मैं भी कुछ हूँ कि नहीं? जिसके जो जी में आए, करता है। ऐसा है, तो मुझे ज़हर क्यों नहीं दे देते?'

'ज़हर नहीं,' शर्माजी ने सहास्य कहा, 'अमृत जैसी मीठी-मीठी बातें करनेवाला दामाद लाने जा रहा हूँ, अब तो खुश हो जाओ।'

'सिर्फ बातों से कुछ नहीं होता,' कमला ने कहना चाहा, किन्तु तब तक शर्माजी फाटक के बाहर पहुँच चुके थे।

बँगले के लान में खड़ी कमला को लगा, वह रो पड़ेगी। इस घर का इतना वैभव, इतनी शान-शौकत एकदम व्यर्थ है। उसे इस घर में आने के बाद से आज तक हार्दिक सन्तोष नहीं मिला, सिर्फ शुरू के कुछ दिनों को छोड़कर, लेकिन तब पति के प्रेम में वासना का अंश अधिक था। मन दोनों के आज तक नहीं मिल सके। क्यों? आखिर ऐसा क्यों?

कमला को अपने विचारों तथा युग के साथ कदम मिलाकर न चल पाने में दोष नज़र न आता था। उसके खयाल से यह सब इसलिए हुआ था, क्योंकि वह एक गरीब परिवार की कन्या थी। वह गरीब थी और अपने साथ अच्छा दहेज नहीं लाई थी।

ठीक है! क्षण भर बाद कमला ने स्वाभिमान से अपने आँसू पोंछ

डाले, और क्रोध में बँगले के अन्दर जा, सीढ़ियाँ चढ़ती हुई ऊपर की छत पर जाकर बैठ गई। यदि बाप-वेटी को अपनी जिद पूरी करनी है तो शौक से करें। वह स्वयं कुछ न कहेगी; लेकिन अब उस 'भांड़' के लिए न तो वह चाय वगैरह बनाकर रखेगी, न उन लोगों का स्वागत ही करेगी। एकाध रात के लिए उस अनजान औरत को जगह क्या दे दी, वे लोग सिर हो गए। ठाठ देखो कि अब आकर कुछ दिन हमारे ही बँगले में हमारी छाती पर मूँग दलेंगे ! तभी कमला को लगा कि बँगला उसका नहीं, उसके पति का है। बँगला ही नहीं, हर चीज़ पति की है। वह तो अपने साथ मायके से कुछ भी नहीं लाई थी। उसे हक ही क्या है किसी को मन-मानी करने से रोकने का ?

कमला को फिर रोना आ गया, और इस बार छत पर बैठे-बैठे ही वह सिसक-सिसककर रो पड़ी। वह भूल गई कि सामने, सड़क के उस पार तथा बगल में स्थित बँगलों की छतों से, उसकी छत साफ़ दिखाई पड़ती है, और छत पर इस तरह रोना मोहल्लेवालों की नजरों में सन्देह उत्पन्न कर सकता है।

वह बस, रोए जा रही थी, हिचकियाँ ले रही थी। भारत में कम पढ़ी-लिखी स्त्रियों की यह दशा है—वह सोच रही थी—आर्थिक दृष्टि से वे पति पर निर्भर हैं, अतः पति जो चाहे, करे, उन्हें रोकने-टोकने का कोई हक नहीं। जब नए विचारों के पढ़े-लिखे प्रोफेसरों के घर में यह हाल है, तो दूसरे पुरुषों का तो कहना ही क्या ! कमला के गाँव के पण्डितजी श्रद्धालु औरतों के बीच बैठकर 'मनुस्मृति' में से पढ़ा करते थे—'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।' स्वयं पण्डितजी के यहाँ भी नारियाँ पूजी जाती थीं, लेकिन देवता वहाँ शायद ही रमते हों; क्योंकि यह पूजा पान-फूल से नहीं, बल्कि डण्डों और थप्पड़ों से की जाती थी।

पुरुष सिर्फ पुरुष है। कमला ने महसूस किया, लोभी, स्वार्थी और शासक वृत्ति का, चाहे वह गाँव का अशिक्षित पुरुष हो, चाहे नगर या

महानगर का शिक्षित बुद्धिजीवी ! उसका पौरुष बेचारी अबलाओं पर ही निकलता है ।

गनीमत इतनी ही है—कमला के मन ने कहा—कि नीलिमा उच्च शिक्षाप्राप्त लड़की है । उसका 'गँवार' पति उस पर अनावश्यक रौब कभी न जमा सकेगा । और, यहीं से कमला के विचारों ने पलटा खाया—शर्माजी को भी बच्ची का कम खयाल नहीं है । तभी तो उन्होंने उसे इतनी शिक्षा दिलाई है कि वह अपनी जरूरतों के लिए किसी की मोहताज न रहे, बल्कि मौका पड़ने पर अपने साथ चार और पेटों में भी अन्न डाल सके । खयाल वह भी नीलिमा का खूब रखते हैं, लेकिन जाने क्यों, अपने विचारों, अपनी योजनाओं को कमला से छुपाकर चलते हैं । उस पर वह वैसा विश्वास ही नहीं करते, जैसा उनसे वह चाहती है; नहीं तो उसे कोई पागल कुत्ते ने थोड़े ही काटा है कि वह उनका विरोध करती रहे !

क्रोध कम होते ही कमला की इच्छा नीचे चलकर चाय का पानी चढ़ा देने की हुई । महाराजिन चौके में थी । रसोईघर से खनाखन की आवाजें आ रही थीं । लेकिन चाय खुद ही चढ़ाना अच्छा होगा । आजकल नौकरों से, जरा कोई काम ज्यादा करने को कहो, भुनभुनाना शुरू कर देंगे । यह सब प्रजातन्त्र का प्रसाद है । पहले ये नौकर कैसे सिर के बल दौड़कर काम करते थे । कमला की खीझ अब दिशा बदलकर महाराजिन की ओर बहनेवाली ही थी कि वह ठिठक गई ।

उसने छत से देखा, एक काली टैक्सी उसके बँगले के फाटक के सामने आकर ठहर गई है और नीलिमा के साथ उतर रही है एक सुन्दर युवती, उस दिनवाली अपरिचित महिला तथा सबसे अन्त में शर्माजी का सहारा लेकर एक सुन्दर युवक, जिसकी कमीज की एक आस्तीन खाली झूल रही है ।

कमला को निकट-दृष्टि-दोष अवश्य हो चला था, किन्तु दूर की चीजें साफ दीखती थीं । उन्होंने जैसे ही युवक का चेहरा ध्यान से देखा, उनका दिल धक् से रह गया ! यह चेहरा ! यह चेहरा आज कितने साल बाद

वह देख रही हैं ! क्या हरनामसिंह नया रूप धरकर आ पहुँचा है, जिसका जात-पाँत की दीवारों के कारण करीब पच्चीस साल पहले कमला से मिलन होते-होते रह गया था। असम्भव ! तव....तब क्या यह हरनाम का बेटा है ?

'कमला....!' जैसे हरनामसिंह ही आज उसे अपने कानों में फुसफुसाता लगा, 'सन्तान हमारी आत्मा का अंश होती है। मेरे बेटे और तुम्हारी बेटी का मिलन अपना ही मिलन है—नए रूप में मिलन ! इसे रोकने की कोशिश मत करो कमला, इसे रोकने की कोशिश मत करो।'

'नहीं रोकूंगी, अब नहीं रोकूंगी।' वह बुदबुदा उठी, जैसे कोई पागल अपने-आपसे बातें करता है या गाँव का टोना-टोटका करनेवाला ओझा किसी प्रेतात्मा से।

और वह नीचे दौड़ गई अपने भावी दामाद—अपने 'बेटे'—का स्वागत करने के लिए।

१५

रामू को नीलिमा की माँ का उत्साह और दौड़-दौड़कर चाय आदि लाना देखकर बेहद आश्चर्य हो रहा था, क्योंकि नीलिमा ने उसे समझा रक्खा था कि वह उसकी माँ की किसी बात का बुरा न माने। वह दिल की अच्छी, किन्तु वाणी की कटु और उग्र हैं। रामू की माँ को भी एक दिन पहले शर्माजी ने कुछ ऐसा ही इशारा शायद अपनी पत्नी के विषय में दिया था, इसी लिए माँ भी रामू को वहाँ किसी बात का बुरा न मानने और 'आर्टी-पार्टी' की बातें न छेड़ने का आग्रह कर के लाई थीं।

लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि नीलिमा की माँ ही उसके आगत-स्वागत में सबसे ज्यादा दौड़धूप कर रही थीं। रामू को भीतर-ही-भीतर एक लज्जा-सी हो रही थी यह सब देखकर।

'आप बैठिए न माँजी !' अन्त में उसे कहना ही पड़ा, 'मेरा पेट है या पिटारी, जिसमें इतना सब भरता चला जाऊँ !'

'मेरा कोई बेटा नहीं है भैया।' उन्होंने स्नेहसिक्त स्वर में कहा, 'आज तुम्हें खिला-पिलाकर अपने अरमान पूरे कर रही हूँ। तुम चुपचाप खाते जाओ !'

कटे हाथवाले अपने बेटे पर इनका इतना स्नेह देखकर रामू की माँ की आँखें कृतज्ञता से गीली हो उठीं।

इधर नीलिमा आभा को अपने साथ ले जाकर बँगले के लॉन में अपना लगाया बगीचा दिखलाकर लौटी, तो उसे भी खिलाने-पिलाने के लिए ड्राइंगरूम में खींच लाई, जहाँ शर्माजी, रामू और नीलिमा की माँ नाश्ते की टेबिल पर डटे थे।

'आओ बेटी !' आभा की ओर पिता की स्नेहपूर्ण मुस्कान से देखकर शर्माजी बोले, 'नाश्ता करो। आज यह घर गुलजार हो उठा है। मैं बहुत खुश हूँ।'

आभा शर्माई-सी, नीलिमा की बाँह पकड़, उसे भी साथ बैठाती हुई स्वयं बैठ गई।

आज वही रामू था, जो उस दिन नीलिमा से बस की पहली मुलाकात में चंचलता का पुतला बना हुआ था, और वही नीलिमा, जिसने बस में कहा था, "डॉक्टर के लिए झूठी लाज-शरम की मैं जरूरत नहीं समझती," लेकिन वही होते हुए भी दोनों आज जैसे कुछ और ही हो गए थे—शिष्ट, शर्मीले और चुपके-चुपके एक-दूसरे को देखकर मुस्कराकर गर्दन झुका लेनेवाले, क्योंकि रामू की यहाँ उपस्थिति का कारण अब दोनों से ही छिपा नहीं था, और यही 'कारण' दोनों के बीच एक 'तीसरा' बनकर खड़ा हो गया था।

उस दिन दोपहर के भोजन के बाद रामू शर्माजी के कमरे में उनके पलंग के साथ ही बिछे एक पलंग पर करवटें बदल रहा था। शर्माजी खर्राटे भरने लगे थे, लेकिन रामू को दिन में सोने की आदत न थी।

नीलिमा अस्पताल जा चुकी थी, और आभा भीतर नीलिमा के कमरे में उसी के बिस्तर पर लेटी-लेटी साप्ताहिक 'धर्मयुग' के चित्र देख रही थी। उसे इस घर में सबसे आकर्षक वस्तुएँ दो ही लगी थीं : रेडियो और पत्र-पत्रिकाएँ। उसने तो मन-ही-मन यह निश्चय कर लिया था कि इस बार मेजर के आने पर वह उनसे एक रेडियो ले देने और कुछ पत्रिकाएँ खरीद देने का आग्रह करेगी।

रामू की माँ रात अस्पताल की जागी हुई थीं, इसलिए उन्हें भी कमला के कमरे में गुलगुले बिस्तर पर नींद आ गई।

कमला को यह वक्त अच्छा जान पड़ा, अपने मन की उलझन दूर करने का। यद्यपि रामू के बोलने के लहजे और हँसने की उसकी आवाज एकदम निकट से सुनने के बाद उन्हें शक न रह गया था कि यह हरनाम का ही बेटा है—हरनाम, जो करीब पच्चीस-छब्बीस साल पहले कमला की जिन्दगी में आया था, उसी का बेटा। लेकिन मन न माना और उसने जाकर शर्माजी के कमरे में झाँका।

रामू जाग ही रहा था। 'माँजी!' उसने कहा और उठ बैठा।

कमला ने इशारे से रामू को ड्राइंगरूम में बुलाया।

रामू को उत्सुकता हुई।

बैठक में टँगी शर्माजी की पुरानी बन्दूक और शेर-चीते की खालें एक रहस्यमय वातावरण उत्पन्न कर रही थीं। न जाने श्रीमती शर्मा क्या बातें जानने के लिए बुला रही हैं। उनके विचित्र स्वभाव के बारे में सुनी हुई बातें एक साथ रामू के मस्तिष्क में कौंध गईं।

'सोए नहीं?' कमला ने पूछा।

'नहीं माँजी, मैं दिन में नहीं सोता।' रामू ने कुछ-कुछ आश्वस्त होते हुए कहा।

'मैं भी नहीं सोती,' कमला ने कहा, 'मैंने सोचा, कुछ बातें ही हों। अरे, खड़े क्यों हो? बैठ जाओ बेटा।'

दोनों ही सोफों पर आमने-सामने बैठ गए। ड्राइंग-रूम का पंखा

निःशब्द घूमने लगा, साथ ही कमला का मस्तिष्क भी। उन्हें लगा कि रामू नहीं, हरनाम उनके सामने बैठा है और सारी दुनिया घूम रही है। वह भूल गई कि रामू से क्या पूछना है। उन्हें देश-काल का भी होश न रहा! उसे लगा कि वह पच्चीस-छब्बीस साल पहले की कमला है और उसके सामने बैठी सूरत का नाम चाहे कुछ भी हो, वह वही सूरत है, जो हमेशा उसका पीछा करती रही है—हर जगह।

कमला के रोंगटे खड़े हो गए और निकट था कि वह उस मोहिनी सूरत के पैरों पर गिर पड़ती, कि तभी उसे लगा, सामने बैठी सूरत आश्चर्य से कह रही है, 'आप मुझसे कुछ बातें करना चाहती थीं, माँजी ?'

'ओह ! हाँ।' कमला वर्तमान में लौट आई और शर्मिन्दा-सी होकर बोली, 'मैं तुम्हारी सूरत देखकर भूतकाल में भटक गई थी, बेटा।'

'मैं तो भूत-प्रेत नहीं, वर्तमान—ज्वलन्त वर्तमान काल का मनुष्य हूँ माँजी।' रामू की विनोदप्रियता सहसा जाग उठी। उसने हँसकर पूछा, 'क्या मेरी शक्ल किसी भूत से मिलती है ?'

कमला भी हँसी न रोक सकी। खिलखिलाकर हँसते-हँसते दोहरी होकर उसने कहा, 'नहीं बेटा, यह बात नहीं। भूत देखने का सौभाग्य या दुर्भाग्य अब तक मुझे नहीं मिला। मैं तो 'भूतकाल' की बात कर रही थी।'

'बात एक ही है।' रामू ने शरारत के साथ नकली गम्भीरता ओढ़कर कहा, 'जो मर चुका है, जो वर्तमान नहीं है, वही 'भूत' है। जिसके पैर उलटे हैं, जो पीछे की ओर—बीते की ओर चलता है, वह 'भूत' है। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि जो लोग बीते हुए सुख की याद में वर्तमान को—यथार्थ को—नकारते हैं, सबके सब 'भूत' हैं।'

कमला को एक आघात-सा लगा। वह भी तो यथार्थ को नकारकर बीते हुए की ओर खिंच चली थी। उसे लगा, जैसे उचित समय पर रामू के मुख से किसी अलौकिक शक्ति ने उसे सचेत कर दिया हो। वह सँभल गई और रामू की जमीन, खेती-बारी आदि के विषय में प्रश्न करने लगी।

'जमीन हम लोगों की थोड़ी-सी है,' रामू ने बतलाया, 'और खेती के तरीके वही पुराने हल-बैल ! भैया के फौज में और मेरे फैक्टरी में चले जाने से, गाँव का एक बूढ़ा आदमी-तिनकू-सब सँभालता है। हम लोग 'ताऊ-ताऊ' करके उसे जो कुछ दे देते हैं, ले लेता है।'

'तुम यदि एक ट्रैक्टर खरीद लो और स्वयं सब देखो,' कमला ने कहा, 'तो खेती से काफी आय हो सकती है। उपज बढ़ जाने पर दूसरे गाँववाले भी तुम्हारा साथ देंगे और उनकी जमीन भी मिलाकर सब लोग कोआपरेटिव ढंग की खेती करो, तो सोने में सोहागा हो जाए।'

कमला ने ये बातें सिर्फ पत्र-पत्रिकाओं में पढ़कर सीखी थीं। फिर भी उस जैसी तथाकथित पुरातनवादी महिला के मुख से ऐसे विचार सुनकर रामू भी प्रभावित हुए बिना न रह सका।

'मैंने तो सुना था, आप पश्चिमी सभ्यता से आई हुई चीजों की प्रशंसा नहीं करतीं, माँजी ?' रामू ने पूछा।

सचमुच उसके पति शर्माजी ने यदि यही बात—ट्रैक्टर से खेती करने की—कही होती, तो कमला बैलों के गोबर की वैज्ञानिक उपयोगिता का वर्णन कर ट्रैक्टर जैसी पाश्चात्य वस्तु का इस्तेमाल करने के खिलाफ ही बोलती; लेकिन जब रामू ने उसके मुँह की बात छीन ली, तो बाजी उलट गई।

'पश्चिम की हर चीज बुरी नहीं होती।' कमला ने गर्व से कहा, 'आज रेल, मोटर से लेकर दाढ़ी बनाने के तुम्हारे सेफ्टी रेजर तक—हर चीज पश्चिमी सभ्यता की ही देन है। हाँ, धूम्रपान, नारियों द्वारा अपने अंगों का भोंडा प्रदर्शन, और अपने देश में भी अँगरेजों की भाषा का इस्तेमाल, ये कुछ बातें जरूर गलत हैं, इनसे मैं घृणा करती हूँ।'

रामू को इसमें कोई आपत्ति नहीं थी। उसे लगा, इस भली और नेकदिल औरत को व्यर्थ ही बदनाम किया गया है।

'मेरी गलतफहमी दूर हो गई, माँजी !' रामू ने जैसे खेद व्यक्त करते हुए कहा।

'बेटा, तुम्हारे पिताजी नहीं हैं ?' हठात् कमला ने कुछ झिझकते हुए पूछा।

'नहीं।' रामू ने ठंडी साँस छोड़कर कहा, 'मैं अभागा दो-तीन साल का था, कि वह चल बसे। यदि वह होते....'

'तो आज तुम पर गर्व करते,' कमला ने वातावरण को बोझिल होने से बचाने की कोशिश करते हुए कहा, 'तुमने अपने त्याग से उनका नाम अमर कर दिया। हाँ, उनका क्या नाम था ?'

'स्वर्गीय ठाकुर हरनामसिंह।' रामू ने कहा।

हरनाम ! कमला को फिर उसके अतीत ने घेर लिया। वह नदी का किनारा, वह वंशी की आवाज, जिसे सुनते ही वह खिंची चली जाती थी ! वह हरे-हरे कुंज, वह पीपल की छाँह, और फिर सारे वातावरण का धुएँ और 'ठाँय-ठाँय' से भर जाना। जैसे कोई भूली-बिसरी कहानी !

अब रामू के सामने बैठना कमला के लिए कठिन हो गया। किसी काम का बहाना कर वह भीतर चली गई और अपने कमरे में अपने पलंग पर सोती रामू की माँ को उन्होंने विचित्र प्रेम और ईर्ष्या भरी दृष्टि से देखा।

यही है वह भाग्यशालिनी नारी, जिसने उस पुरुष-रत्न को अपनी झोली में पा लिया था। जरूर इसने कोई अच्छे कर्म किए होंगे पिछले जन्म में, जो कमला से न हो सके, नहीं तो इसकी जगह वह स्वयं होती !

वह स्वयं ! 'आह !' जैसे इस कल्पना से कमला पर एक मीठा नशा छा गया। वह पास ही पड़ी एक आराम-कुर्सी पर गिर पड़ी और अतीत में डूब गई।

१६

हरीपुर। राजनगर की लाल पत्थरों वाली पहाड़ी के पीछे बसी ब्राह्मणों की एक छोटी-सी बस्ती। पहाड़ी के पीछे से उगनेवाला सूरज जैसे

सबसे पहले अपनी किरणों के हाथों से इसी गाँव का शृङ्गार करता है। गाँव के समीप से बहती नदी का पानी झिलमिला उठता है।

उस कलकल् करती जलधारा में उगते सूर्य का प्रतिबिम्ब देखने के चाव से ही शायद रोज सुबह एक षोडशी किशोरी घड़ा बगल में दबाए पायलें छुनछुनाती आती है और नदी में गागर डुबो देती है। पानी में दिखते सूर्य भगवान् के लाल-लाल प्रतिबिम्ब को देखकर किशोरी की कोमल हथेलियाँ श्रद्धा से जुड़ जाती हैं। शायद कभी सूर्य भगवान् प्रसन्न होकर उसे अपने ही जैसा छबीला एक वर........। धत्! वह अपने से ही शरमाकर भाग जाती है।

'पण्डितजी।' पड़ोस का एक नाई उसके पिता पंडित दातादीन की चाँद घोंटते हुए कल कह रहा था, 'कमला बिटिया सयानी हुई। अब इनका रोज नदी से पानी लेने जाना ठीक नहीं। कुएँ से ही पानी भर लेना चाहिए।'

'क्यों?'

'नदी पार के ठाकुर वहाँ चिड़ियाँ मारने आते हैं। किसी दिन ऐसा न हो कि पंखवाली चिड़ियाँ मारते-मारते........।'

'चोप!' पण्डित दातादीन गरज उठे, 'क्या बकता है? ठाकुरों की मजाल नहीं आग में हाथ देने की। यहाँ कोई पोथी-पतरा वाले पण्डित नहीं हैं। परसुराम के बंसज हैं, परसुराम के!'

नाई 'ब्रह्मतेज' देखकर काँप उठा।....

'इस जैसे टुच्चे लोग दोनों पक्षों को भड़काने के सिवा और जानते ही क्या हैं'—कमला आज तड़के ही नदी की ओर जाते हुए सोच रही थी—'यहाँ ऐसा कह गए, और ठाकुरों के यहाँ जाकर न जाने क्या चिनगारी लगाएँ! इस जात का भरोसा नहीं।'

नदी में घड़ा डूबते ही आज जैसे उसी में से वंशी की तान निकल पड़ी। हे ईश्वर! कमला ने चौंककर चारों ओर देखा—दूर-दूर तक

पहाड़ और जंगल सूने थे। उसे नानी की भूत-प्रेत वाली कहानियाँ याद आ गईं।

तभी किसी बाघ का गर्जन कहीं पास ही से सुनाई पड़ा और उसका कलेजा 'धक्' से रह गया; क्योंकि पलटकर देखते ही बाघ से उसकी आँखें चार हो गईं। वे हिंस्र आँखें! कमला की रूह काँप उठी।

एक तरफ बाघ, दूसरी तरफ गहरी नदी। जैसे ही बाघ उछला कि कमला ने भय से आँखें मूँद लीं। उसे लगा, अब वह गई! किन्तु यह क्या ? बाघ देर क्यों लगा रहा है ?

तभी बाघ की दहाड़ सुनाई पड़ी और कमला की आँखें खुल गईं। बाघ सामने ही बर्छी से छिदा तड़प रहा था और भयंकर गर्जन कर रहा था।

भय का प्रभाव अभी तक कमला पर से नहीं हटा था और बाघ के उस 'अन्तिम' गर्जन से भयभीत हो, वह पास ही खड़े बर्छी चलानेवाले पुरुष से लिपट गई।

कुछ सेकण्ड ही वह उससे लिपटी रही कि सहसा शरमाकर अलग हो गई। उसकी दृष्टि झुक गई, फिर धीरे-धीरे ऊपर उठी। उसने देखा, वह एक बाँका नवजवान था—पुराने भारतीय शिकारियों जैसी चुस्त काली पोशाक, कन्धे पर तरकश, हाथ में धनुष, ओठों पर मूँछों में से झाँकती मुस्कान!

उस मुस्कान से कमला फिर शरमा गई। 'कौन....कौन हैं आप ?' उसने कम्पित कोमल स्वर में पूछा।

'ठाकुर हरनामसिंह!' युवक ने हँसकर कहा, 'नदी-पार के गाँव में रहता हूँ। इस पार छिपकर चिड़ियाँ मारने आता हूँ। आज बाघ हाथ लग गया।'

'छिपकर क्यों ?'

'तुम्हें नहीं मालूम ? इधर कुछ बिचौलियों ने ऐसी हवा बिगाड़ दी है कि तुम्हारे गाँव के लोग हम ठाकुरों के जानी दुश्मन हो रहे हैं।'

'मैं इस दुश्मनी को मिटा दूँगी।' कमला ने दृढ़ स्वर में कहा, 'मैं उन्हें तुम्हारे उपकार की बात बतलाऊँगी।'

'पगली!' उस युवक ने इस तरह हँसकर कहा, जैसे वह उसका अपना ही कोई हितैषी हो, 'इस तरह अनजाने तुम फूस में और चिनगारी छोड़ बैठोगी। उपकार एक तरफ हो जाएगा और मेरे छिपकर इस पार आने की खबर से भड़ककर तुम्हारे गाँववाले कोई नया बवाल खड़ा कर देंगे।'

कमला गहरे सोच-विचार में पड़ गई। क्या इन्सानियत इस कदर गिर चुकी है?

'सोच-विचार न करो।' युवक ने कहा, 'अब तुम जाओ। कोई तुम्हें मेरे साथ देख न ले।'

'अच्छा!' कहकर कमला लौटने को हुई, तभी उसकी नज़र युवक की कमर के पट्टे में खुँसी हुई वंशी पर जा पड़ी। 'अरे, यह वंशी तुम्हीं बजा रहे थे क्या?'

'हाँ! क्यों?'

'बहुत अच्छा बजाते हो।' कमला के मुँह से शरमाते-शरमाते निकल गया, 'एक बार फिर बजाओ न?'

'कल बजाऊँगा। अब जाओ, नहीं तो कोई देख लेगा।'

'ठाकुर होकर डरते हो?' न जाने कैसे कमला के मुँह से निकल गया।

'ठाकुर मौत से भी नहीं डरते। लेकिन तुम्हारे लिए कहता हूँ, जाओ अभी।'

उस आदेशात्मक स्वर की वह अवज्ञा न कर सकी। उसे जाना पड़ा। लेकिन तब से वह रोज खिंची चली आती इस सरिता-तट पर। युवक वहीं मिलता, उसे वंशी की मधुर धुन सुनाता, जिसे सुनकर कमला को तन-मन की सुध न रह जाती। वह उस युवक के चौड़े कन्धे पर अपना सिर टिका देती। उसके बालों की खुशबू से जब युवक को नशा आने

लगता और वंशी बजाते-बजाते वह ठहर जाता, तो वह शरमाकर दूर हो जाती—'बजाओ न, रुक क्यों गए ?'

'तुम बजाने दो, तब न ?' युवक अपने उसी नशे में कमला को पकड़ने को झुकता, तो वह हँसकर अँगूठा दिखाती भाग जाती। भागकर हरे-हरे कुंजों में छिप जाती। तभी युवक दूसरी ओर से चक्कर लगाकर आता और उसे थाम लेता। कमला सारी सुध-बुध खो बैठती; लेकिन जब युवक के प्यासे अधर उसके अधरों पर झुकने लगते, तो अपनी कामनाओं का वलपूर्वक दमन कर वह अपना हाथ मुँह पर रख लेती—'अभी नहीं।'

युवक लज्जित हो जाता अपनी इस लोभी मनोवृत्ति पर। वह अपनी वंशी और बर्छी उठाकर चलने लगता, तो कमला को दौड़कर उसे मनाना पड़ता, कहीं सदा के लिए ही रूठकर न चला जाए।

कई बार वे दोनों नदी की लहरों पर डोंगी में सैर करते और प्रेम के गीत गाते, भविष्य के लिए वादे करते, कसमें खाते। लेकिन....लेकिन वे कसमें पूरी न होनी थीं, न हुईं।

किसी ईर्ष्यालु ने दोनों को साथ देखकर पण्डित दातादीन के कान भर दिए। कमला संघर्ष का सामना करने को तैयार थी। यदि दातादीन गरम होते, तो उसके पास भी जवाव तैयार थे; लेकिन दातादीन क्रुद्ध न हुए, सिर्फ दुःखी हुए। उन्होंने आत्मपीड़न का रास्ता पकड़ा, जिसने कमला को भी विचलित कर दिया।

'ठीक है।' उन्होंने आँखों में आँसू भरकर कहा, 'बाह्मन की लड़की ठाकुर के घर जाएगी। दुनिया देख लेगी कि सन्तान पर बिश्वास करने का नतीजा यही है। तेरी माँ के न रहने पर मैंने सदा तुझे माँ की ममता और पिता का प्यार दोनों दिये। तुझ पर अटूट बिस्वास किया, बल्कि अन्धविस्वास किया, इसीलिए तू कुल मर्यादा सबको रौंदती चली गई। अब मैं स्वर्ग जाकर तेरी माँ को मुँह दिखाने लायक भी नहीं रहा।'

'नहीं बापू!' कमला भी रो पड़ी, 'ऐसा न होगा। मैं कुल-मर्यादा की हत्या न करूँगी। मैं अपनी आत्मा की हत्या कर डालूँगी। जात-पाँत

की दीवारों से घिरी इस सड़ी-गली दुनिया में आत्मा जैसी मुक्त चीज जिन्दा रह ही नहीं सकती।'

दूसरे दिन उसने अपने सीने पर पत्थर रखकर ठाकुर को समझा दिया कि अब वह उसे भूल जाने की कोशिश करें; क्योंकि जात-पाँत की इस गलीज़ दुनिया में प्रेमी आत्माओं का मिलन सम्भव नहीं।

'मेरा न आत्मा में विश्वास है,' हरनाम बिगड़ पड़ा, 'न परमात्मा में। जो कायर इस लोक को न बना सके, वह परलोक क्या बनाएगा? मेरा तो अपने बाहुबल पर विश्वास है। चलो मेरे साथ। देखें, ये बाह्मन क्या करते हैं? मेरा सारा गाँव मेरे लिए कटने को तैयार हो जाएगा।'

'नहीं, हरनाम! नहीं!' कमला काँप उठी, 'मुझे इतनी पापिनी, रक्त पीनेवाली पिसाचिनी न बनाओ, कि मेरे कारन गाँव के गाँव कट मरें! यह नहीं होगा! भगवान् को मंजूर हुआ तो हम फिर मिलेंगे, किसी और रूप में। इस जन्म में मुझे भूल जाओ—तुम्हें मेरी कसम!'

और वह उलटे पैरों वहाँ से भाग आई। फिर कभी उसे हरनाम उस जगह नहीं मिला। हाँ, जिस जगह उसने बाघ से उसे बचाया था, वहीं कुछ वृक्षों के तनों पर तीर से बिंधे हुए पान के आकार के दिल का चित्र वह खींच गया था, शायद उसी बर्छी की नोक से। पास ही उसकी वंशी के टुकड़े इधर-उधर पड़े थे, जिनमें मानो हरनाम की आत्मा बोल रही थी, 'लो, अब कभी वंशी नहीं बजाऊँगा—कभी नहीं!'

कमला की इच्छा हुई थी कि वंशी के उन टुकड़ों को सहेजकर ले चले, किन्तु मोह और बढ़ाना ठीक न समझा। उसने अपनी इस इच्छा पर काबू पा लिया, और उन टुकड़ों को अन्तिम बार चूमकर, उन पर दो बूंद आँसू टपकाकर वह लौट आई थी। हाँ, उस दिन के बाद कमला ने नदी की तरफ जाना छोड़ दिया, जहाँ की हर चीज में हरनाम की मीठी-मीठी यादें थीं और आँसू भी थे।

और, कुछ दिन बाद जंगल का सारा सौन्दर्य 'ठाँय-ठाँय' और बन्दूकों के धुएँ से भर गया। सुना गया कि शहर के कुछ शिकारी आए हैं।

इन्हीं शिकारियों के नेता थे राजनीति के विद्यार्थी छबीले युवक शर्माजी। बन्दूक से और निगाहों से भी निशाना लगाने में 'एक्सपर्ट'! उन्होंने एक दिन गाँव में से दलबल समेत गुजरते हुए एक कुएँ पर पानी भरती इस ब्राह्मण-किशोरी को देख लिया। और, उसके रूप पर ऐसे मोहित हुए कि कैम्प पहुँचते ही अपना नाई उसके पिता के पास भेज दिया।

शहर का नाई था—बातें बनाने में बड़ा चतुर! उस पर शर्माजी सजातीय थे, अमीर थे। पैसा जहाँ होता है, जन्म- कुण्डलियों के ग्रह-नक्षत्र मिलते देर नहीं लगती।

शर्माजी का खर्च तो बहुत हुआ, लेकिन कमला दुल्हन बनकर उनके शयनकक्ष में आ बैठी। किन्तु वह कमला की मात्र देह ही देह थी। आत्मा नाम की चीज उस देह में तभी मर चुकी थी, जिस घड़ी उसने हरनाम का दिल तोड़ दिया था। अब उसकी देह शर्माजी की हुई, या किसी तीसरे को हो जाती, कमला के लिए बराबर था।

१७

नीलिमा के मकान के पिछवाड़े के छोटे-से बगीचे में रामू सुबह की चाय के बाद आज का अखबार उलट रहा था। नीलिमा पास ही बाँस की एक कुर्सी पर बैठी चुपचाप उसे देख रही थी। घर के अन्य सदस्य चाय के बाद भीतर, कमरों में चले गए थे।

बाँस की छोटी-सी कुर्सी पर बैठा रामू, सामने बाँस की ही नीली टेबिल पर रखे अखबार को अपने एक हाथ से उलटता-पलटता, नीलिमा को बड़ा प्यारा और मासूम लग रहा था। एक हाथ कट जाने पर भी उसके चेहरे की लापरवाही और निर्भीकता में कोई कमी न हुई थी।

'गुड !' सहसा रामू के मुँह से आश्चर्य के साथ निकल गया।

'क्या हुआ ?' नीलिमा ने जिज्ञासा प्रकट की।

'जरा देखो,' रामू ने मुस्कराते हुए कहा, 'एक ओर तो इस पूँजीवादी अखबार ने मजदूरों पर हुई लाठी-गोली-वर्षा की जिम्मेदारी हमारी पार्टी पर थोपी है, दूसरी ओर एक ऐसा समाचार भी मजबूर होकर इसे छापना पड़ा है, जो हम लोगों की नैतिक विजय का सबूत है।'

'वह क्या ?' नीलिमा उत्सुकता से अपनी कुर्सी छोड़कर रामू के ठीक पीछे आ खड़ी हुई और अखबार पर सरसरी नजर दौड़ाने लगी।

'यह देखो !' रामू ने छोटे टाइप में छपे एक समाचार पर उँगली रख दी, नीलिमा उसे पढ़ने लगी :

शीर्षक था : 'न्यायिक जाँच की माँग।' और समाचार इस प्रकार था : "मजदूर गान्धीवादी यूनियन के अध्यक्ष श्री चन्द्रप्रताप सेठी ने पिछले शनिवार को मजदूरों पर हुई लाठी-गोली-वर्षा की न्यायिक जांच की माँग की है। श्री सेठी को सन्देह है कि जुलूस में कुछ गैर-मजदूर-तत्व मौजूद थे, जिनका उद्देश्य आग में घी छोड़कर प्रदर्शन को असफल करना था। यदि ऐसा है, तो मामले की छानबीन होनी चाहिए और अपराधियों को दण्ड मिलना चाहिए।"

'सेठी साहब ने यह वक्तव्य देकर हम लोगों का बहुत उपकार किया है।' रामू ने कहा, 'यदि यही माँग हम लोगों ने की होती, तो कोई विश्वास न करता, क्योंकि हर अपराधी अपने को निर्दोष कहता है। लेकिन सेठी जैसे तटस्थ, गान्धीवादी नेता जब कोई बात कहते हैं, तो हमारे गान्धीवादी शासकों के कान भी खड़े हो जाते हैं।'

'सचमुच यह तुम लोगों की नैतिक विजय है', नीलिमा ने रामू को प्रशंसापूर्ण नेत्रों से देखकर कहा।

'आप' की दीवार पिछले दिनों इन दोनों के बीच से हट चुकी थी। कुछ रुककर नीलिमा ने फिर कहा, 'यह इस बात का भी सबूत है कि भगवान् कभी अन्याय नहीं करता।'

'भगवान् !' रामू ठहाका मारकर हँस पड़ा, फिर बोला, 'कहाँ हैं तुम्हारे भगवान् ?'

'मेरे सामने !' नीलिमा के मुँह से निकल पड़ा, और लज्जा से उसके कपोल आरक्त हो उठे।

'मुझे भगवान् कहती हो ?' रामू ने मुस्कराकर पूछा, फिर वहाँ से भागने को तत्पर होती नीलिमा की कलाई थाम ली और कहा, 'भैया-भाभी तो मुझे शैतान कहते हैं।'

'वे लोग स्नेह में कहते होंगे।' नीलिमा रुक गई और आहिस्ते से हाथ छुड़ाकर बोली, 'यों समाज में जिसे शैतान या भगवान् कहा जाता है, वे वास्तव में इन्सान के ही दो रूप हैं। इन्सान थोड़ा नीचे गिर गया तो शैतान हो गया और थोड़ा ऊपर उठ गया तो भगवान् !'

'तो तुम्हें निराश होना पड़ेगा।' रामू ने कहा, 'मैं सिर्फ़ इन्सान हूँ—सर से पैर तक विशुद्ध इन्सान !'

'तब तो और भी अच्छा है,' नीलिमा भी शरारत से हँसकर बोली, 'पूजा नहीं करनी पड़ेगी। और, वैसे भी आजकल के नए भगवानों और शैतानों—दोनों—से जनता तंग आ चुकी है। जो इन्सान से उठकर भगवान् बन जाते हैं, वे पत्थर के भगवान् हो जाते हैं—जनता की तकलीफों की ओर से अन्धे, बहरे ! और शैतान तो शैतान हैं ही।'

'रामू बेटा, तुमसे मिलने के लिए कोई मनीरामजी बाहर बैठे हैं,' सहसा कमला ने रसोईघर के द्वार से बगीचे में झाँककर कहा।

'उन्हीं की बात चल रही थी माँजी !' रामू ने उठते हुए शरारत भरी मुस्कान के साथ कहा, और नीलिमा अपनी हँसी न रोक सकी।

'तुम लोग क्यों हँसे ?' कमला ने उत्सुकता से पूछा और एक तरफ हटते हुए रामू को जाने के लिए जगह दे दी।

'कुछ नहीं माँ !' नीलिमा ने भी अन्दर आते हुए, कठिनाई से हँसी रोककर जल्दी से कहा, 'अँगरेज़ी की एक कहावत है न—थिंक ऑफ डेविल, एण्ड ही इज़ देयर !'

कमला जल्दी में कुछ न समझी, फिर भी हँसी में योगदान दे बैठी।

रामू जैसे ही ड्राइंगरूम में पहुँचा कि सौफे पर बैठे मनीरामजी तपाक

से उठकर खड़े हो गए। शर्माजी वहाँ नहीं थे। शायद उन दोनों को एकान्त में बात करने के लिए छोड़कर वह दूसरे कमरे में जा चुके थे।

'भाई रामसिंह!' मनीराम ने शोकपूर्ण मुद्रा में कहा, 'तुम्हारे साथ जो दुर्घटना घटी, उससे मुझे और मेरे दल को हार्दिक क्लेश पहुँचा। हम समझते हैं कि जिस दल की अदूरदर्शितापूर्ण नीति का यह दुःखद परिणाम हुआ है, उस दल की सदस्यता से अब तुम तत्काल त्यागपत्र दे दोगे।'

'मैं ऐसा प्रतिक्रियावादी नहीं हूँ,' रामू ने दृढ़ स्वर में कहा, 'मेरे दल की नीतियाँ मेरे लिए सही थीं, हैं और रहेंगी। हाँ, इस दुर्घटना के पीछे जिन कुछ बाहरी तत्वों का हाथ था, उन्हें उनकी उचित जगह पर पहुँचा देने के बाद मैं इस्तीफा देने की सोच रहा हूँ—दल से ही नहीं, समूची राजनीति से।'

इन शब्दों के पीछे ऐसा एक संकल्प झलक रहा था कि एक क्षण भर को मनीराम भी काँप उठे। तो क्या इसे सब मालूम हो गया! क्या सेठी आकर इसे सब बता गए? अब क्या किया जाए?

'हाँ, मुझे भी मालूम हुआ है,' मनीराम ने जैसे अँधेरे में तीर चलाया, 'इस घटना में एक दूसरे दल का हाथ था।'

'किसका?'

मनीराम मुस्करा उठे—इसे अब तक कुछ मालूम नहीं।

'किसका हाथ था?' रामू ने फिर पूछा, उन्हें चुप देखकर।

'सेठी साहब के दल का!' मनीराम ने मुस्कराते हुए कहा।

'असम्भव।' रामू उत्तेजित हो उठा, 'आपने आज के अखबार में उनका वक्तव्य नहीं पढ़ा? यदि उनके दल का हाथ होता, तो न्यायिक जाँच की माँग कर क्या वह अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मार लेते?'

'यही तो आज की राजनीति है भैया!' मनीरामजी पान से रँगे दाँत निपोरकर बुजुर्गों के अन्दाज में बोले, 'लोग पहले कत्ल करते हैं, फिर खुद ही जाकर थाने में रिपोर्ट लिखा आते हैं। पहले किसी के घर को दियासलाई दिखा देते हैं, फिर खुद ही सहानुभूति व्यक्त करने आ खड़े होते

हैं ।.तुम ग्रभी बच्चे हो । हम लोग यही सब देखते, सुनते ग्रौर करते चले ग्रा रहे हैं ।'

'वह तो ठीक है, मगर........' रामू का विश्वास डिग चला, 'लेकिन न्यायिक जाँच होने पर तो उनकी कलई खुल सकती है ।'

'कभी नहीं !' मनीराम ने जोर देते हुए कहा, 'वह जानते हैं कि माँग करने से जाँच हो ही जाए, यह जरूरी नहीं । इस कारण उन्होंने ग्रपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिए यह तीर छोड़ दिया । फिर ग्रगर जाँच कल को होने भी लगे, तो उनकी ग्रहिंसावादी यूनियन पर कौन सन्देह करेगा ?'

बात कुछ-कुछ रामू के मन में बैठ चली ! मनीराम पुराने राजनीतिज्ञ हैं । झूठ क्यों बोलने चले ? फिर ये पोंगापंथी भले ही हों, ग्राखिर एक धर्मध्वजी दल के नेता हैं, सत्य ग्रौर नैतिकता पर जोर देनेवाले !

सहसा ऐसा लगा कि एक टैक्सी हार्न देती हुई बँगले के सामने ग्राकर रुक गई है ।

'ग्ररे !' मनीराम ने एक खिड़की का पर्दा हटाकर बाहर झाँकते हुए घबराहट भरे स्वर में कहा, 'सेठी स्वयं ग्रा पहुँचे ! मैं चलता हूँ । हाँ, इतना ध्यान रखना कि मेरी बातों का उल्लेख उनसे न कर देना !'

ग्रौर 'जय धर्म' कहकर वह एक दरवाजे से बाहर निकले ही थे कि दूसरे दरवाजे से मुस्कराते हुए सेठी हाथ जोड़े भीतर ग्रा गए, 'नमस्ते, रामू भाई !'

'नमस्ते !' रामू ने उपेक्षा से कहा । उसे ग्राज सेठी की मुस्कान जहरीली मालूम हुई ।

'रामू भाई !' सेठी साहब ने कहा, 'मैं तुम्हें बेहोशी में ग्रस्पताल में देख ग्राया था; लेकिन तुम्हारा एक हाथ कटा देख, तुम्हारे होश में ग्राने तक रुकने ग्रौर तुमसे ग्राँखें मिलाने की मेरी हिम्मत न पड़ी । ग्राज साहस करके तुम्हें देखने ग्राया हूँ । बहुत दुःख होता है यह देखकर कि........'

'कि मेरा सिर्फ एक हाथ कटा है !' रामू ने व्यंग्य से मुस्कराते हुए

कहा, 'आपको खुशी होती, यदि मेरा सर भी कट गया होता। इससे आप-का और आपकी पार्टी का रास्ता तो साफ हो जाता !'

'यह क्या कह रहे हो भाई ?' सेठी भौंचक्के रह गए ! उनका चेहरा साफ बतला रहा था कि रामू की बातों से उन्हें चोट लगी है।

'क्यों ? बहुत बुरी लग रही हैं न आपको ये बातें !' रामू के स्वर में व्यंग्य का अंश बढ़ता गया, 'लेकिन जरा अपने दिल से पूछिए ! मेरी जुबान पर इस वक्त वही है, जो आपके दिल में है।'

सेठी सन्न रह गए ! तो क्या.........रुपयों वाली बात रामू को मालूम हो गई। वही बतलाने तो आज वह आए थे !

'अगर आज मैं अपाहिज हूँ, तो इसका जिम्मेदार कौन है ?' रामू का स्वर तेज होता गया, 'अगर आज मैं अपनी माँ के पैर नहीं दबा सकता, फैक्टरी में काम करके उसके लिए दो रोटियाँ कमाकर नहीं ला सकता, साइकिल नहीं चला सकता, ज्यादा क्या कहूँ, खुश होने पर एक हाथ से ताली नहीं बजा सकता, तो इसका जिम्मेदार कौन है, आप अच्छी तरह जानते हैं।'

'जिम्मेदार कौन है ? कौन है जिम्मेदार ?'—की आवाजें सेठी को ड्राइंगरूम में चारों तरफ गूँजती महसूस हुईं। उन्हें लगा, रामू का कालिख-पुता चेहरा पूछ रहा है—'जिम्मेदार कौन ?' उनकी स्वर्गीया अरुणा पूछ रही है—'जिम्मेदार कौन ?' और स्वयं उनकी आत्मा पूछ रही है—'जिम्मेदार कौन ?' इसका उत्तर.........? इसका उत्तर एक ही था, वही उनके मुँह से फिसल पड़ा—

'मैं स्वयं !' और, उनकी आँखों में आँसू भर आए। 'मैंने ही तुम्हें अपाहिज बनाया है। मैंने ही तुम्हारी माँ को रुलाया है, तुम्हें रुलाया है। भगवान् को और स्वर्गीय राष्ट्रपिता की आत्मा को रुलाया है। और, अब मैं स्वयं रोता फिर रहा हूँ। कोई नहीं मिलता, जो मुझे सजा देकर इस अन्तर्द्वन्द्व से उबार ले। एक पागल था गोडसे, जिसने महात्मा गान्धी के

शरीर की हत्या की थी; लेकिन मैंने मनीराम के रुपए स्वीकार करके गान्धीजी की आत्मा की हत्या की है।'

'मनीराम के रुपए ?' रामू ने आश्चर्य से भरकर पूछा।

'सब जानते हुए भी पूछते हो !' सेठी ने भरे गले से कहा, 'यदि मैं कुछ गरीबों की सहायता करने के उद्देश्य से उस बदमाश के रुपए स्वीकार न कर लेता, तो मेरी जुबान पर ताले क्यों पड़ जाते ? मैं पुलिस को या तुम्हें रातों-रात उनके विनाशकारी इरादों की सूचना दे देता, तब या तो तुम प्रदर्शन स्थगित कर देते या जुलूस में घुसे उनके आदमियों से सतर्क रहते।'

'ओफ !' रामू की समझ में सब आ गया। मनीराम का आज उसके पास आना गहरा मतलब रखता था। वह आज रामू के मन में सेठी के प्रति अविश्वास के बीज इसीलिए बो गया था, कि सेठी से रामू खुलकर बात भी न करे और मनीराम की काली करतूतों पर से कभी पर्दा न उठ सके।

'मुझे माफ कर दीजिए सेठी साहब !' रामू ने उठकर अपने एक हाथ से सेठी के गालों पर बहते हुए आँसुओं को पोंछ दिया, 'मैं मनीराम की बातों में बहककर आपको ही असल अपराधी समझ बैठा था।'

'मनीराम की बातें ?' सेठी ने चौंककर पूछा, 'क्या वह यहाँ आया था ?'

'वह आपके आने के एक सेकण्ड पहले ही दूसरे दरवाजे से निकल गया।' रामू ने भरे गले से कहा, 'मैंने आप पर जो अनुचित व्यंग्य-वर्षा की, सब उसी के भड़काने का फल था। उसने कहा कि आपके ही आदमियों ने जुलूस में शामिल होकर उपद्रव किया और कूटनीतिवश आप ही न्यायिक जाँच की माँग कर रहे हैं।'

'कमीना कहीं का !' सेठी के मुँह से गाली निकल गई, फिर वह बोले, 'यदि वह सच्चा होता, तो मुझे आते देखकर खिसक न जाता चोर की

तरह। मैं जो आरोप उस पर यहाँ लगा रहा हूँ, वह उसके मुँह पर भी कह सकता हूँ। लेकिन उसमें इतनी हिम्मत नहीं है।'

'अब तो मुझे भी विश्वास हो गया,' रामू ने कहा, 'कि यह सब उसी की कारगुजारी थी। लेकिन उस क्षण न जाने कैसे मैं उसके बहकावे में आ गया। मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ। क्या आप मुझे माफ नहीं करेंगे ?'

'नहीं, तुमने गलत नहीं कहा कुछ।' सेठी ने पश्चात्ताप की दृष्टि से देखकर रामू से कहा, 'रुपया लेने और सत्य को छुपाने के कारण मैं भी मनीराम से कोई छोटा मुजरिम नहीं हूँ। मैं तो खुद तुमसे माफी माँगना चाहता हूँ।'

'बेहतर हो, हम दोनों ही एक-दूसरे को माफ कर दें। रामू ने मुस्कराते हुए कहा, और सेठी के एकदम पास पहुँचकर अपने एक हाथ से उनका एक हाथ स्नेह से दबा दिया।

सेठी ने भी स्नेह के आवेग में रामू को अपनी बाँहों में भरकर गले से लगा लिया।

'मंजूर है।' सेठी ने स्नेह से कहा, 'अब तक हम-तुम विरोधी थे, अब भाई-भाई हैं। तुम्हारा सिर्फ एक हाथ नहीं, अब मेरे दोनों हाथ भी तुम्हारे साथ हैं। हाँ, इस मनीराम को क्या सजा देना चाहते हो ?'

'भैया !' सेठी के प्रति रामू का सम्बोधन बदल गया और आहिस्ते से आलिंगन-मुक्त होते हुए वह बोला, 'अगर आपने आज से मुझे अपना छोटा भाई ही माना है, तो इस खुशी के मौके पर उसे भी क्षमा कर दीजिए।'

'और कोई भी तुम्हारी बात मैं मान सकता हूँ,' सेठी ने स्नेह-भरी झिड़की से कहा, 'लेकिन यह नहीं मान सकता। बापू ने कहा था, अन्याय देखकर भी उसका विरोध न करना अन्यायी से सहयोग करने के बराबर है। मैं आज ही एक मनीआर्डर से मनीराम का रुपया लौटा रहा हूँ। उसके बाद उसके पाप को गुप्त रखने का दायित्व मुझ पर न होगा।'

'लेकिन एक बात है,' रामू ने हँसकर कहा, 'मनीआर्डर शायद वह

लेगा ही नहीं, आपको ऋणी बनाए रखने के लिए। या ले भी ले, तो आनेवाले 'खतरे' से सतर्क हो जाएगा।'

'हाँ, यह बात तो है।' सेठी सोच में पड़ गए, 'लेकिन फिर उपाय क्या है?'

'आप वह रुपया अभी अपने ही पास रखिए हिफाजत से,' रामू ने कहा, 'जाँच-आयोग के सामने आपका बयान हुआ नहीं, कि वह एकान्त में आपसे आकर जरूर मिलेगा और आपको धिक्कारेगा। उसी समय आप वह रुपया उसके मुँह पर पटक दीजिएगा।'

'लेकिन यदि ऐसा न हुआ,' सेठी ने आशंका प्रकट की, 'वह न आया, तो मेरी आत्मा मुझे धिक्कारेगी। जब उसे दिया वचन मैंने तोड़ दिया है, तो उसका रुपया रखने का भी मुझे कोई अधिकार नहीं। जब तक वह पाप का पैसा मेरे पास है, मुझे अपनी जुबान ही 'परतन्त्र' महसूस होती है।'

'तो ऐसा कीजिए, वह रकम चुपचाप मनीराम के दल के नाम चन्दा-फंड में जमा करा आइए। आपके पास उसकी रसीद भी रहेगी और आप आत्मग्लानि से भी बचे रहेंगे।' रामू ने कहा, 'वैसे यह आपकी भलमन-साहत ही है कि रुपया लौटा रहे हैं। और कोई होता, तो साफ मुकर जाता कि उसने रुपया लिया भी था।'

'नहीं-नहीं!' सेठी ने कहा, 'रुपया लौटाना तो है ही। खैर, बाद में ही सही! अच्छा, तो मैं चलूँ!'

'अभी कैसे जाइएगा।' कहती हुई नीलिमा मुस्कान बिखेरती एक ट्रे में चाय-बिस्कुट वगैरह ले आई। नीली साड़ी और नीले ही ब्लाऊज में वह पूरी 'नीलिमा' लग रही थी। 'आप लोगों का भरत-मिलाप मैं देख चुकी थी,' उसने मुस्कराते हुए कहा, 'उसके बाद मुँह मीठा करने का भी कुछ दस्तूर होता है न!'

'आपका परिचय?' सेठी ने प्रश्न-भरी मुस्कान से रामू की ओर देखा।

'यह मेरी बेटी डाक्टर नीलिमा है।' कहते हुए शर्माजी मुस्कराहट के साथ सेठी को नमस्कार करते कमरे में दाखिल हुए, 'और, आपको एक खुश खबरी भी सुना दूँ, आपके मिस्टर रामू हमारे भावी दामाद हैं।'

'बधाई है !' सेठी उल्लसित स्वर में बोल उठे और सबके साथ चाय-नाश्ते में जुट गए।

१८

रामू अब पहले की तरह स्वस्थ हो चला है। वह माँ और भाभी के साथ फिर गाँव आ गया है। शर्माजी के परिवार से जो नया सम्बन्ध जुड़ गया है, उसके बाद इन लोगों का वहाँ अधिक रहना ठीक नहीं था। इसके सिवा माँ ने इसी वैशाख के अन्त में विवाह के लिए एक लग्न भी निकलवा ली थी। अतः घर पर तैयारियाँ भी होनी थीं।

घर आते ही इन लोगों को, रामू के बड़े भैया मेजर के कुछ पत्र एक साथ मिले। ये विभिन्न तिथियों को उन्होंने भेजे थे और आभा के विभिन्न पत्रों के उत्तर थे, जो संयोगवश एक साथ ही आ पहुँचे थे।

मेजर ने रामू के साथ घटित दुर्घटना पर क्लेश और नए 'सम्बन्ध' पर हार्दिक हर्ष व्यक्त किया था। उन्हें यद्यपि इतनी जल्दी दुबारा छुट्टी नहीं मिल सकती थी, पर उन्होंने लिखा था, शादी में वह जरूर आ रहे हैं। भाई का एक हाथ कट जाना मामूली घटना नहीं है। अधिकारियों को उन्होंने घर का पत्र दिखला दिया है और इसी बात पर छुट्टी जरूर मिल जाएगी।

माँ और आभा बेहद प्रसन्न हुईं और खुशी-खुशी विवाह की तैयारियों में लग गईं; किन्तु रामू इधर कुछ गम्भीर और खोया-खोया-सा रहने लगा।

पिछली दुर्घटना में जहाँ उसने अपना एक अमूल्य अंग खो दिया है, जिसकी कसक उसे खाते-पीते, सोते-जागते बराबर होती रहती है, वहीं

उस दुर्घटना में उसने बहुत-कुछ पाया भी है। इस जिन्दगी में जो उसे कभी वैसे न मिल सकती थी, वह अनमोल, सुन्दर, सहृदया नीलिमा मिल गई थी। उसके एक प्रबल विरोधी सेठी उसके 'अपने' हो गए थे, और जो सबसे बड़ी बात थी, वह यह कि लोगों में अब उसे 'इज्जत' मिलने लगी है। पार्टी में भले ही वह शौकिया और दिल-बहलाव के लिए कभी शामिल हुआ था, लेकिन आज अनिच्छा से ही सही, एक हाथ कटाकर वह 'हीरो' या 'नायक' बन गया है। उसके प्रति सहानुभूति व्यक्त करने के लिए मजदूर सभाएँ कर रहे हैं, और 'मन-मन भावै, मूड़ हिलावै' वाले अन्दाज में 'ना-ना' करते भी उनमें जाने तथा फूलमालाएँ पहनने में उसे आनन्द आने लगा है।

रामू के विचार भी तेजी से बदल रहे हैं। 'भाग्य' और 'भगवान्' जैसे शब्दों को पहले वह मजाक में उड़ा देता था, लेकिन अब उसे लगता, नीलिमा का इस तरह आकस्मिक रूप से उस जैसे निपट साधारण पुरुष को मिल जाना, क्या भाग्य की बात नहीं है ? भगवान् की हँसी उड़ाने पर कहीं यह सौभाग्य उससे छिन तो नहीं जाएगा ?

फलतः रामू के शब्दों में अब एक संयम आ गया है। अब उसमें 'जीने की चाह' पैदा हो गई है, इसीलिए अब वह हिंसा का घोर विरोधी बन गया है।

उसके दल के लोग इशारों में हँसी के साथ कहते, 'एक हाथ ही कट जाने से कामरेड रामू अहिंसावादी हो गए हैं।'

किन्तु रामू किसी से बहस में न उलझता। बाबाजी के पास अब भी रामू जाता था, किन्तु अब उनसे भी उसका मतभेद होने लगा है।

'भगवान् ने किसी को छोटा-बड़ा या अमीर-गरीब पैदा नहीं किया।' बाबा अब भी गाँव के युवकों को सम्बोधित करके कहते, 'पैसा ही माया है, जिसने अमीरों को, सेठों को भगवान् से दूर कर दिया है........'

'तो बाबा !' रामू हँसकर टोक देता, 'इसका अर्थ यह हुआ कि माया-रहित गरीब लोग भगवान् के ज्यादा नजदीक हैं। फिर वे क्यों उसी

'माया' में फँसने के लिए आन्दोलन करें, जिसे आप अमीरों के लिए बुरा बतलाते हैं ?'

बाबा को खीझकर विषयान्तर करना पड़ता।

कभी जब बाबा कहते, 'पापी कोई जनम से नहीं होता। जिसकी जरूरतें पूरी नहीं होतीं, जो गरीबी से मजबूर है, वही पाप करता है....'

तब रामू मुस्कराकर कहता, 'यह बात कुछ समझ में नहीं बैठती। यदि यही बात है, तो अमीर क्यों पाप करते हैं ? गरीबों में भी क्यों सच्चरित्र लोग होते हैं ? इसलिए पाप का सम्बन्ध अमीरी या गरीबी से न होकर मनुष्य के स्वभाव से है।'

एक दिन बाबा क्रुद्ध हो उठे, 'तुम तो पूरे परमहंस होते जा रहे हो ! तुम अमीर और गरीब दोनों को एक ही तराजू पर तोलने लगे हो। या तो तुम पार्टी छोड़ दो, या हमारी सभाओं के रंग में भंग करना छोड़ दो।'

'यदि पार्टी में तर्क और बुद्धि के लिए कोई जगह नहीं,' रामू ने भी बिगड़कर कहा, 'तो मैं पार्टी इसी क्षण छोड़ता हूँ।'

और, रामू पार्टी से सचमुच अलग हो गया। लेकिन बाबा ने जो सोचा था, वह न हुआ। पार्टी छोड़ देने से रामू के प्रभाव में कोई कमी न हुई, बल्कि पार्टी के ही प्रभाव को उस गाँव और बिस्कुट-फैक्टरी में गहरा धक्का लगा।

बाबा की कुटी पर होनेवाली सभाओं में भीड़ कम होने लगी, और होते-होते एक दिन लोगों ने देखा, कुटी खाली है। बाबा अपना बोरिया-बिस्तर समेटकर जा चुके हैं—शायद किसी और गाँव की ओर, जहाँ भेदभाव हो, असन्तोष हो।

रामू को अनेक दलों ने अपनी सदस्यता के लिए आमंत्रित किया, लेकिन उसने नीलिमा और कमलाजी की राय के अनुसार सबको हँसकर एक ही उत्तर दे दिया, 'अब मैं राजनीति में नहीं पड़ूँगा। शास्त्रीजी का नारा था—जय जवान, जय किसान। सो मेरे भैया 'जवान' हैं ही, और मैं बनूँगा 'किसान'। यही जीवन की सच्ची राजनीति है।'

इस उत्तर के पीछे निहित 'कान्तासम्मितोपदेश' के ज्ञाता सिर्फ सेठी थे। वह मन्द-मन्द मुस्करा देते। शेष सब लोग रामू के उत्तर से 'प्रभावित' हो जाते।

रामू ने अपने 'नए प्रभाव' का लाभ उठाकर गाँववालों को प्रेरित कर दिया था कि वे गाँव में एक भी सरकारी अस्पताल न होने की शिकायत अधिकारियों से करें। और रामू के 'त्याग' से प्रभावित भोला, राधे आदि अनेक युवक सक्रिय हो उठे थे। रामू उनकी सक्रियता पर मन-ही-मन मुस्कराता—वह स्वार्थ के साथ परमार्थ को जोड़ने में कितना कुशल हो गया है। गाँव में सरकारी अस्पताल की छोटी-सी शाखा भी खुल गई, तो यहाँ के लिए अपना नाम पेश करनेवालों में नीलिमा सबसे आगे रहेगी। इस तरह न उसे नौकरी छोड़नी पड़ेगी, न रामू को अपना गाँव।

विवाह की लग्न नजदीक आ रही थी। रामू अब भी अक्सर माँ और आभा को लेकर घण्टे-दो घण्टे को शर्माजी के घर पहुँच जाया करता। सेठी भी वहाँ आ पहुँचते और हँसी-ठहाकों के बीच किस प्रेस से निमंत्रण-पत्र छपाए जाएँ, कौन-सा बैण्ड ठीक किया जाए, बारात के लिए किस प्रकार का प्रबन्ध किया जाए—सब तय किया जाता।

रामू और शर्माजी—दोनों यद्यपि सैद्धान्तिक दृष्टि से पुराने ढंग के विवाह, तथा तड़क-भड़क और टीमटाम में फिजूलखर्ची के खिलाफ थे; किन्तु एक ओर रामू की माँ और दूसरी ओर नीलिमा की माँ इसमें कोई दोष न देखती थीं। उनका कहना था, पुराने लोग क्या मूर्ख थे, जो सब कुछ इसी ढंग से करते रहे? माना कि युग बदल गया है; लेकिन मनुष्य तो नहीं बदला है। वह खुशी के मौके पर खुशी और दुःख के मौके पर दुःख अब भी व्यक्त करता है। अदालती विवाह को रामू की माँ 'अँगरेजी तरीका' बताकर त्याज्य सिद्ध करतीं, तो प्रोफेसर-पत्नी कमलाजी इसी बात को तर्कजाल में लपेटकर कहतीं, 'पश्चिम की संस्कृति स्वार्थप्रधान है। वहाँ शादी का सुख सिर्फ वर-वधू तक सीमित कर दिया गया है।

हमारे यहाँ का आदर्श अपने सुख में दूसरों को भी हिस्सेदार बनाना है, चाहे खर्च कुछ अधिक ही हो जाए। आज जब पश्चिम के हिप्पी तथा बीटल युवक भारतीय संस्कृति की ओर खिंचे चले आ रहे हैं, तब हमारे लिए अपनी ही संस्कृति की उपेक्षा करना कहाँ तक उचित है ?'

'वाह !' सोफे पर पहलू बदलकर मुस्कराते हुए सेठी प्रशंसा से कह उठते, 'क्या बात कही है माँजी ! आपको तो हमारे दल की नेत्री होना चाहिए था।'

'पश्चिम के देशों का हमारी संस्कृति की ओर खिचना बिलकुल स्वाभाविक है,' शर्माजी कहते, 'और उनकी संस्कृति की ओर हमारा खिंचना भी उतना ही स्वाभाविक है। मानव सिर्फ मानव है। उसे पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण की सीमाओं में बाँधना असम्भव है।'

'हियर ! हियर !' रामू हँसकर ताली बजा देता, 'मैं भी आपसे सहमत हूँ चाचाजी !'

शर्माजी का सेठी लिहाज कर जाते थे, लेकिन रामू का लिहाज वह क्यों करने लगे ? नतीजा यह होता कि कमला और शर्माजी की बहस बन्द हो जाती और राजनीति के दो कुशल खिलाड़ियों में 'डिबेट' शुरू हो जाती। उन दोनों के लिए यह बहस, मात्र एक 'खेल' होती; लेकिन शर्मा जी घबराकर कह देते, 'भई, छोड़ो भी। अब हम लोग मध्य मार्ग अपनाए लेते हैं। कुछ प्राचीनता रहे, कुछ नवीनता। बारात आए, बैंड बजे, सब हो, लेकिन वर-बधू को एक ट्रैक्टर जरूर दिया जाएगा मेरी ओर से। यदि इसे आप दहेज न कहना चाहें, तो 'भेंट' कह लीजिए।'

इन वार्त्ताओं से अलग आभा और नीलिमा भीतर बैठी हँसी-मजाक और परस्पर छेड़छाड़ करतीं। उन्हें ट्रैक्टर और बैंड जैसी नीरस बातों में क्या आनन्द आता ? हाँ, बीच में यदि रामू पानी भी पीने भीतर पहुँच जाता, तो नीलिमा शरमाकर वहाँ से चले जाने की चेष्टा करने लगती; किन्तु आभा हँसकर उसे पकड़ लेती।

'अब कब तक भागोगी गोरी ?' आभा पुरुषों के-से अन्दाज में कह

देती और रामू भी लज्जित हो जाता । भागने की चेष्टा करती नीलिमा को आभा द्वारा पकड़ लिए जाने पर रामू, नीलिमा की हिरनी जैसी आँखों की ओर देखता, जहाँ एक स्निग्ध-सी मुस्कान होती आनन्द और लज्जा-भरी ।

नीलिमा की आँखों से आँखें मिलते ही रामू जैसे भूल जाता कि वह पानी पीने भीतर आया था । उसकी प्यास बुझ जाती और वह मुस्कराता हुआ वहाँ से लौट जाता ।

इन छोटी-छोटी मुलाकातों के अलावा रामू को गाँव में भी रिश्ते की तमाम भाभियों और दोस्तों की छेड़छाड़ का सामना करना पड़ रहा था ।

रामू के इस रिश्ते से सारा गाँव खुश था । अन्तर्जातीय विवाह पर सामान्यतः गाँववाले विशेष प्रसन्न नहीं हुआ करते । लेकिन रामू जानता था, यह अप्रसन्नता तभी होती, जब वह किसी शूद्र या वैश्य की लड़की ले आता । परन्तु वह तो क्षत्रिय होकर शहर के एक ब्राह्मण-परिवार की लड़की ला रहा था—अपने से ऊँचे वर्ण की लड़की, जिसे गाँव के सभी ठाकुर अपना गौरव समझ रहे थे ।

तिनकू ताऊ, जगत मामा, परमेश्वरी चाची सभी के रोम-रोम से रामू के लिए असीस निकल रही थी । वे लोग दौड़-दाड़कर वन्दनवार की सामग्री, छिड़काव के खुशबूदार पदार्थ, और जो-जो उनके पास था, रामू की माँ के पास पहुँचा रहे थे ।

दिन भर गाँव की स्त्रियाँ उसके घर जमा रहतीं । हास-परिहास, छेड़छाड़ और नृत्यगीतों का समाँ बँध जाता ।

१९

मेजर जब पिछली बार गाँव से गए थे, तब उन्हें मालूम न था कि इतनी जल्दी फिर से आना पड़ेगा । यहाँ आकर रामू का एक हाथ कटा देखकर जितना बड़ा आघात उन्हें दुःख का लगा, उतना ही बड़ा खुशी का

भी, यह देखकर कि रामू के विचारों और कार्यों में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया है इस बीच।

अब रामू हँसता कम है। सिर्फ मुस्कराता है! लम्बी-लम्बी बहसें अब नहीं करता। हाँ, कोई एक छोटा-सा तर्कपूर्ण वाक्य कहकर विरोधियों पर भी एक छाप छोड़ देता है अपनी बुद्धि की। 'भगवान्' जैसे शब्दों का अब वह मजाक नहीं उड़ाता, बल्कि अब तो वह कहा करता है, 'समता और आस्तिकता एक-दूसरे की पूरक हैं। समता आनी चाहिए, यह ठीक है; मगर समता क्यों आनी चाहिए, इसका उत्तर सिर्फ एक है, कि सृष्टि के कण-कण में सृष्टा विद्यमान है। सृष्टि को दुखी करना सृष्टा को दुखी करना है। इसलिए ऐसी समता होनी चाहिए, जिसमें कोई भी दुखी न हो—पशु-पक्षी तक।'

मेजर को प्रतीत होता था कि यह सब सेठी जैसे विद्वान् गान्धीवादी नेता के सत्संग का फल है, और इसीलिए मेजर इतनी प्रसन्नता से सेठी से गले मिले, जैसे युगों से बिछुड़ा हुआ भाई दूसरे भाई से मिलता है।

बारात सेठी की नई एम्बेसेडर गाड़ी में निकली, जिसकी किश्तें गत एक वर्ष से वह दे रहे थे। बारात ठहराने का शर्माजी ने उत्तम प्रबन्ध किया था। बारात में आए हुए गाँव के तिनकू ताऊ, जगत मामा, राधे भैया वगैरह तथा शहर के बृजमोहन, श्याम बाबू, देवेन्द्र आदि रामू की फैक्टरी के सहयोगी बराबर कभी पण्डाल, कभी रोशनी तो कभी खाद्य वस्तुओं की प्रशंसा जी खोलकर कर उठते थे। मेजर की दृष्टि में यह प्रबन्ध उचित भी था, क्योंकि उन्हें मालूम हुआ था कि नीलिमा शर्माजी की इकलौती सन्तान है।

शादी नवीनता और प्राचीनता का विचित्र सम्मिश्रण थी। शोर और शहनाइयों के बीच बारात पहुँचते ही सबसे पहले वधू बनी नीलिमा द्वारा रामू के गले में पुष्पहार डलवाया गया। गाँव के बुजुर्गों में इस पर कुछ खुसफुस आलोचना हुई, तभी मेजर ने उन्हें समझाया, 'यह स्वयंवर की

बहुत पुरानी प्रथा है, रामचन्द्रजी के जमाने की।' इस तर्क ने 'ताऊ,' 'मामा' आदि महानुभावों को शान्त कर दिया।

इधर बृजमोहन, देवेन्द्र आदि नए लोगों ने तो इस पर तालियाँ बजाकर आन्तरिक खुशी प्रकट की। एक श्याम बाबू के पुराने संस्कार अवश्य उसे इस नवीनता का स्वागत करने से रोके रहे।

रामू को जैसे नशा आ गया! पुष्पों का उठा हुआ हार, नीलिमा की बाँहों का हार, और दोनों में से उस पार दीखनेवाली नीलिमा की झुकी हुई स्नेहभरी शरमीली आँखें, और होठों पर कठिनाई से रोकी हुई खुशी की मुस्कान! शायद वह सोचती होगी, हार पहनाने में मुस्कराने से कहीं हृदय का आनन्द छलककर बाहर प्रकट न हो जाए, और खिड़कियों-दरवाजों पर डटी सहेलियों में उसे लज्जित न होना पड़े बाद में!

ऐसा ही हार कभी राम ने सीता के हाथों पहना होगा!—रामू सोच रहा था—इस पर आधुनिकता-विरोधी अखबारों के लिए एक सुन्दर हैडिंग गढ़ा जा सकता है—'रामचन्द्र से रामसिंह तक!' और वह मुस्करा ही दिया, भले ही उसकी मुस्कान को निर्लज्जता ही समझ लिया हो किसी ने।

आगे की सब रस्में रामू के लिए एक खेल थीं। एक प्रसन्न खिलाड़ी की तरह वह उन सबमें भाग लेता रहा—वधू के घर पर हुई भाँवरों, अग्नि-प्रदक्षिणा से लेकर स्वयं अपने घर हुई बँधछुड़ाई तक। और अन्त में आ पहुँची वह घड़ी, जिसके लिए उसका हृदय खुशी और शंका से धड़क रहा था।

आभा और रिश्ते की दूसरी भाभियाँ हँसती हुई, उसे लाकर उस सजे हुए कमरे में ठेल गईं, जहाँ पुष्पों की महकती शैया पर नीलिमा छुई-मुई-सी, लजाई-सी बैठी थी—खुद एक महकनेवाले गुलाब की तरह।

गुलाब को लोग क्यों तोड़ लेते हैं—रामू सोचते हुए मुस्कराया—डाल पर लगा हुआ गुलाब जितना सुन्दर लगता है, क्या तोड़ने, सूंघने और मसले जाने के बाद भी वह वैसा ही रह जाता है? लेकिन नहीं,

गुलाब यदि तोड़ा न जाए, तो एक दिन मुर्झा जाता है वहीं लगा-लगा। जब तक गुलाब अपने को मिटा नहीं देगा, अपना पराग इधर-उधर बिखेर नहीं देगा, आगे की सृष्टि कहाँ से होगी ! नई कलियाँ किसके गर्भ में जन्म लेंगी ?

नई कलियाँ ! फैमिली-प्लानिंग, बर्थ-कंट्रोल ! सोचते ही रामू सहसा जोरों से हँस पड़ा और अपनी 'बेशर्मी' पर शर्मिन्दा भी हो गया।

नीलिमा ने चौंककर घूँघट हटाया ! उसका वह विस्मित, भोला मुखड़ा रामू को बहुत प्यारा लगा।

'क्यों हँस रहे हो ?' नीलिमा ने पूछा।

'न हँसता तो तुम यह चाँद-सा मुखड़ा क्यों दिखातीं ?' रामू ने मुस्कराते हुए कहा और अपनी बाँहों में अपने गुलाब को घेर लिया।

'छोड़ो !' नीलिमा ने शरमीली मुस्कान से झिड़का, 'बड़े जल्दबाज हो !'

'जल्दबाज कहाँ हूँ !' रामू ने मुस्कराते हुए बत्ती गुल कर दी और फुसफुसाया, 'इन्तजार करते-करते लगता है, सदियाँ बीत गईं, जमाने गुज़र गए। संसार बदल गया, रस्मो-रिवाज बदल गए। मगर न हम बदले, न तुम।'

नीलिमा को रोमांच हो आया अजीब-से आनन्द का। रामू की काव्य-कल्पना की उपज, उसके शब्द नीलिमा को एकदम सत्य लगे और अन्धकार में रामू के प्यासे अधर नीलिमा के अधरों पर झुकते गए—झुकते गए।

२०

जिस रात शर्माजी के बँगले में शादी की धूमधाम थी, और तेज प्रकाश तथा शोरगुल के कारण रात में भी दिन का आलम था, उसी रात दूर एक

बँगले में सन्नाटे और अँधेरे के बीच ईज़ी चेयर पर मौन लेटा हुआ अखिल सिगरेट सुलगाए, मुँह से धुएँ के छल्ले बना रहा था।

आज की रात उसकी नीलिमा किसी दूसरे की हुई जा रही है। अखिल के अरमान और उसके सपने भी आज उसकी सिगरेट की तरह राख हुए जा रहे हैं। और वह चुपचाप इस राख को धीरे-धीरे बिखरकर उड़ते देखने के सिवा कुछ नहीं कर सकता, कुछ भी नहीं!

उसे धुएँ के छल्लों के बीच, दुल्हन बनी नीलिमा नजर आ रही थी—अपने प्रिय नील-परिधान में। नीली साड़ी, नीला ब्लाऊज़ और केशों में सजा हुआ उसका प्रिय पुष्प सफेद गुलाब!

नीलिमा इस रूप में जाने कब से उसके सपनों में आती रही है। वह हमेशा सपनों में उसे अपनी दुल्हन बनी देखता रहा है। उसे देखकर वह शरमीली मुस्कान से नयन झुका लेती थी और वह ज्योंही उसे अपनी बाँहों में समेटने के लिए वढ़ता, कि नींद खुल जाती, सपना भंग हो जाता और वह अपने को एक अव्यक्त आनन्द से रोमांचित पाता!

और आज सचमुच उसका सपना टूट गया है। नीलिमा आज दुल्हन तो बनी है, लेकिन अखिल की नहीं, किसी और की। आज जिसके द्वार पर दूल्हा बनकर अखिल को पहुँचना चाहिए था, उसके द्वार पर कोई और पहुँचा है।

लेकिन अखिल जाने क्यों इस सच्चाई का सामना करने से कतरा रहा है! वह अब भी धुएँ के छल्लों के बीच, दुल्हन बनी नीलिमा के साथ दूल्हे के रूप में अपने को ही देख रहा है। वह देख रहा है—फेरे, रस्मो-रिवाज तथा अन्त में सुहागरात....!

नहीं! अखिल ने अधजला सिगरेट फेंककर दोनों हाथों से अपना सिर थाम लिया। वह यह सब क्या सोच रहा है....! अब यह सब नहीं होने का, कभी नहीं होने का!

सहसा वह सिसक उठा, बच्चों की तरह! वह अब कभी दूल्हा नहीं बनेगा! उसके सिर पर अब कभी सेहरा नहीं बँधेगा! वह जन्म से अभागा

रहा है। बचपन में मामी की जली-कटी सुनकर जब उसके आँसू बहने लगते, तो उसे अपने स्वर्गीय स्नेही माँ-बाप की याद आ जाती थी। वे होते तो उसके आँसुओं को स्नेह से पोंछ देते, लेकिन भगवान् ने उन्हें उठा लिया था।

बड़े होने पर जब नीलिमा उसके जीवन में आई, तो नीलिमा के मधुर व्यवहार से उसे लगा था कि माँ जैसी ममता से ओतप्रोत यह तरुणी उसके आँसुओं को पोंछ देगी। लेकिन आज वही इतनी दूर हो चुकी है, कि इन आँसुओं को पोंछना तो दूर, देख तक न पाएगी वह।

इसमें दोष किसका है? शायद अखिल का ही। उस शाम किले से लौटते समय टैक्सी में शायद वह अखिल के मुँह से अपने 'समाजवादी' विचारों का समर्थन सुनना चाहती थी। अखिल का यह अपराध अवश्य था, कि वह राजनीतिक मतवादों को कभी समझ न पाया, और उस दिन वह अपने मौलिक विचार प्रकट कर बैठा। लेकिन इस जरा से अपराध की उसे इतनी बड़ी सजा देना क्या नीलिमा को उचित था?

नीलिमा ने रामू की विचारधारा के प्रति जब आवश्यकता से अधिक सहानुभूति व्यक्त की थी, तब से अवश्य वह रामू के प्रति अत्यधिक ईर्ष्यालु होता गया। किन्तु प्रेम सदा ईर्ष्यालु होता है। जिस वस्तु से मनुष्य प्रेम करता है, उसे अपनी, और एकमात्र अपनी ही वह देखना चाहता है। इसी सहज ईर्ष्या के कारण अखिल शर्माजी से रामू के विषय में नीलिमा की शिकायत कर बैठा था। शायद तभी से नीलिमा उसे संकीर्ण और ईर्ष्यालु समझ, उससे दूर होती गई थी। लेकिन उसने इस ईर्ष्या का कारण खोजने की कोशिश की होती, तो इसके पीछे डाक्टर अखिल का उसके लिए अनन्य प्यार ही दिखलाई पड़ता उसे!

लेकिन नीलिमा ने अखिल के हृदय को समझने की कोशिश नहीं की—यह सोचकर अखिल का हृदय पानी बन-बनकर नेत्रों की राह बहा जा रहा है। इस दुनिया में शायद कोई कभी अखिल को समझने की कोशिश नहीं करेगा।

समीप ही स्थित एक चर्च की घड़ी ने टन-टन करके बारह बजाए। अखिल की दृष्टि अन्धकार में ही कमरे की उस दीवार की ओर उठ गई, जिस पर बीचोंबीच उसके स्वर्गीय माँ-बाप का एक बहुत पुराना फोटो लटका था।

'माँ! पिताजी!' वह फिर सिसक उठा, 'मुझे अपने पास ही बुला लो! अब सहा नहीं जाता।'

आँसू बहाते-बहाते कब उसके नेत्र बोझिल हो, मुँद गए और कब स्नेहमयी माँ की तरह नींद ने आकर उसे कुछ समय के लिए अपनी गोद में ले लिया, अखिल को स्मरण न रहा।

२१

गाँव में बीते छः-सात दिन नीलिमा को बहुत सुन्दर लगे। उसे लगा कि उसकी जिन्दगी एक सुन्दर काव्य बन गई है—ताल, लय, छन्दों से युक्त और नवरसों से भरपूर।

लेकिन जल्दी ही उसे पता चल गया कि जिन्दगी और काव्य में कितना अन्तर है! उसकी छुट्टी समाप्त हो गई। उसे वधू का वह सुन्दर रूप गाँव में ही छोड़ आना पड़ा और शहर लौटकर फिर से डाक्टर नीलिमा बन जाना पड़ा।

गाँव में अस्पताल खोले जाने की माँग सिद्धान्तरूप में अधिकारियों ने स्वीकार कर ली, लेकिन जब तक उसे अमली जामा न पहनाया जाएगा, नीलिमा और रामू की न जाने कितनी सुन्दर रातें और दिन वियोग में ही कटेंगे। रामू भी शहर आकर रहने लगे, यह हो नहीं सकता। वह शादी में मिला ट्रैक्टर लेकर धरती की माँग सँवारने में जुट गया है। हाँ, माँ और आभा को लेकर वह हर तीसरी-चौथी शाम शर्माजी के यहाँ आ जाता है और फिर रात वहीं रह, सुबह की चाय पीकर ही लौटता है। वह और उसकी माँ इतने पुराने विचारों के नहीं हैं कि नीलिमा को नौकरी

छोड़ने की सलाह दे दें। वह भी तब, जब शीघ्र ही गाँव में अस्पताल खुल जाने की आशा है।

नीलिमा भी बीच-बीच में शनिवार की छुट्टी लेकर गाँव आ जाती है और दो दिन वहाँ रह जाती है।....

अखिल उसे कुछ दिन से बिलकुल ही नहीं मिला। सुना, लम्बी छुट्टी पर है। क्या हुआ उसे? आज हठात् नीलिमा की इच्छा हुई—अस्पताल से लौटते हुए उसे देखती चले। और, उसकी साइकिल उसके बँगले की ओर मुड़ गई।

कुछ ही देर बाद वह अखिल के बँगले के सामने थी।

'साहब हैं?'

'हैं।' पुराने परिचित नौकर ने जवाब दिया, 'गुसलखाने में नहा रहे हैं।'

'नहा रहे हैं?' नीलिमा ने अविश्वास से पूछा, 'इस वक्त?'

'हाँ, मेमसाब!' नौकर ने कहा, 'आजकल उनका ढर्रा ही बदल गया है। जब से छुट्टी पर हैं, दाढ़ी-वाढ़ी भी नहीं बनाते। बेवक्त खाएँगे, बेवक्त नहाएँगे! रात को देर तक जागकर गीता-रमायन, जाने क्या-क्या पढ़ते रहेंगे। लेकिन खैर....आप चलिए बैठक में, वह नहाकर निकलनेवाले ही हैं।'

नीलिमा अन्यमनस्क-सी बैठक में आ गई। इस छोटी-सी बैठक में कितनी ही बार आई है वह। लेकिन तब कितनी व्यवस्थित थी यह बैठक! और अब....? कुर्सी, मेज, अधजला सिगरेट, सुबह का पढ़ा हुआ अखबार—हर चीज जैसे बेतरतीबी से इधर-उधर फेंक दी गई है। आखिर क्यों? अखिल रोजमर्रा की बातों के प्रति इस कदर लापरवाह तो कभी न था। बात क्या है?

नीलिमा अपने दिमाग पर जोर देती हुई हाथ में अपना बैग झुलाती, कमरे की हर चीज का निरीक्षण कर रही थी कि अचानक उसकी दृष्टि एक आले पर जा पड़ी। टेबिल से सटी हुई दीवार में बना यह आला,

जहाँ कभी पहले अखिल एकाध पुराना उपन्यास रख दिया करता था, आज उसे साफ-सुथरा दिखा। पूरे कमरे में सिर्फ यही व्यवस्थित था! इसी में जैसे पहले वाले सफाई-पसन्द अखिल के हाथों का स्पर्श सजीव हो रहा था। लेकिन यह क्या!

नीलिमा ने देखा, आले में एक छोटी-सी फ्रेमजड़ी फोटो के सामने कुछ सफेद गुलाब बिखरे हैं और एक अगरबत्ती सुलग रही है। जैसे अखिल का हृदय ही धू-धूकर जल रहा हो!

सफेद गुलाब! नीलिमा सिहर उठी। सफेद गुलाब उसकी अपनी पसन्द है। जब से नीलिमा ने यह बात रामू को बतलाई है, वह उसे रोज एक सफेद गुलाब लाकर देने लगा है। लेकिन यहाँ....यहाँ सफेद गुलाब का क्या काम?

इतनी देर बाद नीलिमा का ध्यान उस फोटो पर गया और वह प्रकम्पित हो उठी। फोटो नीलिमा की ही थी। एक पिकनिक पर अखिल ने यह फोटो उतार ली थी। फोटो में वह खिलखिलाकर हँस रही थी, पतली-सी सुराहीनुमा अपनी गर्दन को कुछ तिरछी करके, 'जैसे सफेद गुलाब झर रहे हों,' अखिल ने पिकनिक पर ही कहा था हँसकर! सब साथियों के बीच कही गई इस बात को उस समय नीलिमा ने कोई महत्व नहीं दिया था।

महत्व देने लायक कुछ अखिल ने उससे कहा ही कब था? अखिल में हृदय रहा होगा, लेकिन रामू जैसी अभिव्यक्ति उसमें नहीं थी। यदि यह बात होती, तो शायद....? नहीं, अब वह किसी की पत्नी है। अखिल को क्या हक है, किसी भले आदमी की पत्नी की फोटो की इस तरह एकान्त में पूजा करने का?

नीलिमा ने दृढ़ता से बढ़कर वह फोटो उठा ली और अपने बैग में डालकर चलने के लिए कदम बढ़ा ही रही थी कि एकाएक ठिठक गई।

उसकी दृष्टि टेबिल पर पड़े एक लैटरपैड पर लाल स्याही से लिखी कुछ पंक्तियों पर जा पड़ी। कितने सुन्दर और बारीक अक्षर थे:

'तन से तन का मिलन, हो न पाया अगर,
मन से मन का मिलन कोई कम तो नहीं?
खुशबू आती रहे दूर ही दूर से,
सामने हो चमन, कोई कम तो नहीं?'

शायद कुछ अश्रु-बिन्दुओं ने इन अक्षरों पर गिरकर एकाध जगह कुछ स्याही फैला दी थी!

नीलिमा की कमलिनी जैसी आँखें भी भर आई और उसके आँसू पैड पर गिरकर अखिल के आँसुओं से एकाकार हो गए। टेबिल के ठीक सामने फूलों के बीच रखी अपनी ही तसवीर का अर्थ अब वह समझ गई!

उसने कांपते हाथों से अपना बैग फिर खोला, फोटो निकालकर जहाँ की तहाँ रख दी और टेबिल पर पड़ी नीली पेंसिल से जल्दी-जल्दी अखिल की पंक्तियों के नीचे कुछ लिखकर वह चुपचाप उस कमरे से निकल गई।

अगले ही क्षण गुसलखाने से दाढ़ी बढ़ाए, कुर्ता-पाजामा पहने बीमार-सा अखिल निकला और नौकर से नीलिमा के आने और लौट जाने की खबर सुन, पागल-सा बैठक में आ पहुँचा—कहीं वह अपना चित्र न ले गई हो!

लेकिन बैठक में आकर उसकी जान-में-जान आई। नीलिमा के परायी हो जाने के बाद से उसके जिस चित्र को वह 'अपनी नीलिमा' मानकर सीने से लगाए रहा था, वह अपनी जगह पर था।

वह टेबिल के समीप पहुँचा और लैटर-पैड पर अपनी लिखावट के नीचे एक नारी-लिपि देखकर उत्सुकता से पढ़ने लगा—

'अखिल बाबू,

आपके घर यों ही आई थी, लेकिन आपसे आँखें मिलाने का साहस अब नहीं रहा; जाती हूँ।

आज तक मैं समझती थी कि मैंने अपनी शादी से एक 'प्रतिभा' को विध्वंस के मार्ग से हटाकर रचनात्मक दिशा में मोड़ दिया है, लेकिन

आज मालूम हुआ कि इस तरह मैंने एक दूसरी रचनात्मक प्रतिभा का सदा के लिए विध्वंस भी कर दिया है!

आपके यहाँ अपना चित्र देखकर मैं इसे लिये जा रही थी, लेकिन पैड पर आपकी लिखावट पढ़ने के बाद आपका यह आखिरी सहारा भी छीन लेने की शक्ति मुझमें नहीं रह गई है। रखे रहिए उसे, वह 'नीलिमा' आपकी ही है, वह इस बेवफा नीलिमा की तरह पराई नहीं हुई है।'

कागज पर आँसुओं के कई निशान थे और नीचे हस्ताक्षर की जगह सिर्फ़ 'एन' लिखा हुआ था।

अखिल की भी आँखों में आँसू थे और होठों पर जीत की मुस्कान। सहसा वह अट्टहास कर उठा—

'हा हा हा! रामू! तुम जीतकर भी हार गए! और मैं हारकर भी नहीं हारा! हो हो हो!'

नौकर भयभीत हो कमरे में झाँकने लगा—'क्या साहब का दिमाग खराब हो गया? कहीं मार-वार न बैठें।'

अखिल अपनी 'अतीत की नीलिमा'—चित्रमय नीलिमा—को हृदय से चिपटाए, उसे अपने स्नेह भरे आँसुओं से नहलाता, समीप की बेतवाली आराम-कुर्सी पर जा गिरा। फोटोवाली नीलिमा मानो आज भी पहले की तरह उसे देखकर मुस्करा रही थी, जैसे सफेद गुलाब झड़ रहे हों!

मानो वह मुस्कराकर कह रही थी, 'मैं बेवफा नहीं हूँ अखिल। मैं तुम्हारी हूँ।'

नौकर ने भयभीत हो, पास पहुँचकर देखा—साहब किसी दूसरी ही दुनिया में पहुँच चुके थे। कुर्सी पर पड़ा था साहब का निर्जीव शरीर, जिसके होंठ मुस्कराते-मुस्कराते ही पथरा गए थे!